Chapter 2

द्वितीय अध्याय

" सितार के बाज "

द्वितीय अध्याय

" सितार के बाज "

किसी भी वाद्य को विकासोन्मुख होकर चरमोत्कर्ष प्राप्त करने में उसकी वादन शैली एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। वाद्यों का उत्कर्ष पूर्णत: वादन शैली पर अवलंबित होता है। वाद्य के विकास के लिए यह अनिवार्य है कि उसकी स्वतंत्र वादन शैली हो। स्वतंत्र वादन शैली के अभाव में वह पराश्रित होकर अवनति के गर्त में चला जाता है। भारतीय संगीत वाद्यों पर दृष्टिपात करने से यह स्वत: सिद्ध हो जाता है। जिस प्रकार रुद्रवीणा, सरस्वती वीणा तथा सुरश्रृंगार आदि पर ध्रुपद एवं धमार के काल से गायन (ध्रुपद, धमार) की ही सामग्री बजती रही जिससे आधुनिक काल में रुद्रवीणा, सरस्वती वीणा, सुरश्रृंगार एवं रबाब आदि लुप्तप्राय हो गए हैं, उसी प्रकार विचित्र वीणा जिसके विकास में अब्दुल अज़ीज़ खां ने काफी सहयोग दिया आज उसके बजाने वाले भी अत्यल्प हैं। दिलरुबा तथा ताऊस वाद्य यंत्रों को बजाने वाले भी इस काल में विरले ही मिलते हैं, इसका कारण भी इन वाद्यों पर बजे वाली सामग्री ही है जो पूर्णत: गायन पर ही निर्भर है। इसी प्रकार सारंगी जो कि इतना कठिन एवं सम्पूर्ण वाद्य है, वह भी आज मुख्यत: गायन ~~नर्त्तन~~ की संगत के लिए ही प्रयुक्त होता है जबकि इसी के समान वाद्य 'वायलिन' एक स्वतंत्र वाद्य के रूप में बजाया जाता है। इसका यही कारण है कि वायलिन वादक

गायन की विशिष्टताओं को तो लेते ही हैं परन्तु सितार की गतों को भी अधिक से अधिक बजाते हैं।[१] इसी प्रकार सुषिर वाद्यों में बांसुरी एवं शहनाई हैं। ये भी गायन के साथ वाद्य का ही अधिक से अधिक अनुकरण करते हैं जिसके कारण आज यह संगत वाद्य की जगह एकांकी वादन में भी जनसाधारण के समक्ष समा बांध देते हैं।[२,३] इसी श्रेणी में गिटार, जो कि पाश्चात्य वाद्य है परन्तु इसके तारों की व्यवस्था को अनुकूल बनाकर इस पर भारतीय संगीत की सभी सूक्ष्मताएं बजाना संभव है। श्री ब्रज-भूषण काबरा ने इस वाद्य पर चिकारी का तार लगाकर इसे पूर्ण वाद्य बना दिया है[४] तथा उनका वादन श्रोताओं पर इतना गहरा प्रभाव डालता है कि देखते ही बनता है। यह भी अपने वादन को क्रमशः आलाप, जोड़, झाला, मसीतखानी गत एवं रजा-खानी गत बजाकर झाले पर समाप्त करते हैं। तात्पर्य यह है कि जिन वाद्यों के वादन में स्वतंत्र वादन शैली को अपनाकर, गायन को भी उसमें मिलाया गया, वे वाद्य वास्तव में अपने चरमोत्कर्ष को प्राप्त हो गए हैं।

सितार की वादन शैली पर दृष्टिपात करने से जैसाकि पिछले अध्याय में देखा कि यह भी प्रारम्भ में गायन की संगत अथवा लोक संगीत का वाद्य ही था। जिस पर केवल गायन की ही सामग्री बजायी जाती थी, परन्तु उस समय इसका स्थान वह नहीं था जो कि आधुनिक समय में है। वीणा, ध्रुपद एवं धमार आदि की सामग्री इस पर अवश्य बजायी जाती थी परन्तु इसकी अपनी कोई वादन शैली नहीं थी। अठारहवीं शताब्दी सितार के स्वतंत्र वादन की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि इसी समय के करीब जहां न्यामत खां (सदारंग) द्वारा ख्यालों की रचना कर उन्हें विकसित करने का कार्य चल रहा था, वहीं फिरोज खां (अदारंग) के द्वारा सितार वाद्य के वादन में आश्चर्यजनक परिवर्तन किए गए, यहीं से सितार के स्वतंत्र एवं परिपुष्ट बाज का निर्माण हुआ और सितार दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करने लगा।

प्रारम्भ में सितार पर वीणा, रबाब आदि वाद्यों एवं ध्रुपद, धमार का ही अनुकरण किया जाता था, परन्तु उस अवस्था में सितार एक गौण वाद्य के रूप में ही रहा। सितार में आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर इसके लिए अपनी पृथक वादन शैली की ज़रूरत पड़ी एवं वीणा आदि का अनुकरण संतोषप्रद नहीं प्रतीत हुआ, जिसके कारण वीणा के आलाप अंग का वादन सुरबहार पर एवं सितार पर बजाने के लिए इसकी गतों की रचना की गई, जिससे कि वास्तव में सितार का रूप निखर आया। और इसकी वादन शैली में निरन्तर सुधार होते रहे। सितार पर बजने वाली गतें भी मूल रूप से गायन की शैलियों से ही प्रभावित होती थीं, परन्तु मिज़राब के प्रयोग से उनके वादन में भिन्नत्व आ गया और वह गतें अन्य सभी तंत्र, अवनद्ध एवं सुषिर वाद्यों में बजाई जाने लगीं।[१-४] जिसके कारण सितार का बाज भी बहुत द्रुत गति से परिष्कृत हुआ। जैसे-जैसे सितार के स्वरूप में विकास हुआ, वैसे-वैसे ही सितार में वादन का क्षेत्र भी विकसित होता गया तथा सितार में आलाप अंग के लिए सुरबहार की आवश्यकता समाप्त हो गयी। ध्रुपद से आलाप एवं जोड़ आलाप तथा वीणा से तार परन, लड़ी गुथान, लड़ लपेट लेकर जमजमा, कृंतन, कण आदि सौन्दर्योत्पादक तत्वों का सुन्दर प्रयोग कर एवं स्वयं की पृथक गतकारी (बाज) का समीकरण करके सितार को एक सम्पूर्ण वाद्य बना लिया गया।

वादन की कोई शैली जब कुछ नवीन तथा अप्रचलित विशेषताओं से पूर्ण होकर सामने आती है तब उसे बाज कहा जाता है। साथ ही यह भी आवश्यक है कि वह मौलिक तथ्यों पर आधारित होकर अपने में पूर्ण रूप से विकसित होनी चाहिये। उसके विकास एवं पूर्णता में नवीनता का होना भी आवश्यक होता है। प्रचलित बाज के ही आधार पर किसी वादन शैली की रचना कर देने से या उस बाज में थोड़ा सा

परिवर्तन कर देने से ही किसी वादन शैली को नवीन बाज नहीं कहा जा सकता, क्योंकि प्रत्येक वस्तु की रचना कुछ आवश्यक तत्वों के आधार पर हुआ करती है चाहे संगीत हो अथवा साहित्य। बाज किसी एक व्यक्ति के दिमाग की उपज होती है।

नवीन बाज की संज्ञा धारण करने के लिये उसके मिज़राब के बोलों एवं छंदों को प्रचलित बाज से भिन्न होना चाहिये। उदाहरणार्थ मसीतखानी एवं रजाखानी बाज लिए जा सकते हैं -- इन दोनों बाजों की जबसे रचना हुई है, तब से लेकर आज तक ये पूर्ण रूप से प्रचार में हैं। अभी तक इनकी समानता करने वाला कोई अन्य बाज नहीं बन सका है। बाज को गुणीजन विभिन्न प्रकार से परिभाषित करते हैं। श्री अरविन्द पारिख के अनुसार[५] 'मिज़राब के बोलों में अलग-अलग स्वर रचना करके तालबद्ध बजाने को बाज कहते हैं।'

श्री विमलकान्त राय चौधरी बाज को परिभाषित करते हुए कहते हैं[६] कि 'वाद्य संगीत में बजाने की रीति को चलती भाषा में बाज कहा जाता है। जैसे ध्रुपद बाज, ख्याल बाज, ठुमरी बाज इत्यादि। वैसे ही सैनी बाज, मसीतखानी बाज, रजाखानी बाज, इमदादखानी बाज इत्यादि बताए गए हैं। बाज का अर्थ है बजाने की रीति या स्टाइल। रीति के कई नियम हैं। एक वादन रीति का विश्लेषण कर वाद्य वस्तु के पारम्पर्य में एक सुनिर्दिष्ट नियम को छोड़कर अन्य इच्छानुयायी वादन पद्धति को भी बाज कहना ठीक नहीं। बाज को 'चलन' या 'चाल' भी कहा जाता है।' इसी प्रकार वादन की कोई शैली जब कुछ नवीन तथा अप्रचलित विशेषताओं से पूर्ण होकर सामने आती है तब उसे बाज कहा जाता है।

सितार वादन में बाज का एक महत्वपूर्ण स्थान होता है। प्राचीन काल से आधुनिक काल तक बाज के अन्दर कई प्रकार के परिवर्तन दृष्टिगोचर होते हैं जिनके

कारण सितार की वादन शैली में आज तक परिवर्तन का क्रम लगा हुआ है। बाज में परिवर्तन के कई कारण हो सकते हैं। यथा सामाजिक, राजनैतिक, वाद्य सामग्री-गत, वाद्य शैली गत, लयात्मक आदि।

समाज की कुछ मांगें होती हैं जिनकी पूर्ति कलाकार द्वारा की जाती है। इसमें कलाकार को सामाजिक परिस्थितियों के अनुसार स्वयं को बदलना ही पड़ता है, अन्यथा उस कलाकार को जमना मुश्किल हो जाता है। इसी प्रकार प्राचीन काल में जिस राजा का राज्य होता था, उसी के मन का संगीत गाया एवं बजाया जा सकता था। यथा लखनऊ में भोगविलास का बाहुल्य होने के कारण वहां पर रजाखानी बाज आविष्कृत किया गया जो कि श्रृंगारप्रधान था। इसके विपरीत दिल्ली में मसीतखानी बाज का आविष्कार यहां की परिस्थितियों के अनुकूल हुआ। विभिन्न बाजों के वादकों की सामग्री भी निश्चित हुआ करती थी यथा जो वादक रजाखानी बाज बजाता था वह मसीतखानी बाज नहीं बजाता था तथा जो मसीतखानी बाज बजाता था, वह रजाखानी बाज बजाना अपने उसूलों के खिलाफ समझता था। परंतु बाज के विकास के साथ ही वादन की सामग्री में भी समायोजन हुआ एवं मसीतखानी और रजाखानी दोनों बाज सम्मिलित रूप से बजाये जाने लगे। वादन सामग्री के साथ ही सितार की वादन शैली में भी भिन्नता आयी। प्राचीन काल में वादन की शैली बहुत ही सीमित थी, तथा अपनी संकुचित सामग्री ही सितार वादक बजाता था परन्तु विकास के शिखर पर चढ़ने के साथ ही वादन शैली में भी अन्तर आया और वादन में कई शैलियों का सम्मिश्रण करके बजाया जाने लगा। यथा मसीतखानी एवं रजाखानी गतों के वादन के साथ ही उनमें ध्रुपद, रबाब, ठुमरी एवं ख्याल सभी की झलक दिखाई पड़ने लगी है। लयात्मकता में भी आज बहुत ही अधिक परिवर्तन

आया है । अब से कुछ वर्ष पूर्व उदाहरणत: अल्लाउद्दीन खां का ही रिकार्ड सुनें तो ज्ञात होगा कि इस समय में लयात्मक सौन्दर्य बहुत अल्प था । गत में तोड़ों को सम से प्रारम्भ करके सम पर ही उठाया जाता था । यथा अल्लाउद्दीन खां के बजाए तिलक कामोद के रिकार्ड को सुनने से यह स्पष्ट हो जाता है[७] कि उन्होंने कहीं भी तोड़ों को किसी अला स्थान से न उठाकर सम से शुरू करके सम पर ही उठाया है जबकि उन्हीं के शिष्य अली अकबर खां, रविशंकर एवं निखिल बैनर्जी को सुनें तो ज्ञात होता है कि इनके वादन में लय एक कठपुतली सी बनी हुई है और वह जो चाहे जैसे उसे घुमाते हैं । यथा अली अकबर खां एवं रविशंकर की युगलबंदी में बजाया गया राग सिंधु भैरवी, राग सारंग जो कि १९५१ के करीब रिकार्ड किये गये हैं[८] । इनमें लय का काम बहुत अधिक दिखाया गया है । वादन में लय का वैचित्र्य इन्हीं से शुरू होता है, यह कहा जाय तो अतिशयोक्ति नहीं होगी । इन कलाकारों द्वारा कठिन से कठिन तिहाइयों का प्रयोग भी किया गया है ।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि बाज की आविष्कृति के पश्चात भी आद्यन्त वादन में इतने अधिक परिवर्तन हुए हैं जिनका कारण प्रमुख रूप से कलाकार की प्रगतिशील एवं परिवर्तनशील प्रवृत्ति ही है । सितार वादकों द्वारा यथासमय स्वेच्छा, वातावरण एवं परिस्थिति के अनुसार बाज में परिवर्तन होते रहे तथा जिस समय विशेष में जिस वादक विशेष द्वारा वादन में परिवर्तन किए गए वह उन्हीं के नाम से प्रचलित हो गए । कुछ बाज जो वास्तव में श्रेष्ठ एवं व्यापक थे, वे आज तक उसी नाम से विख्यात हैं यथा मसीतखानी बाज एवं रजाखानी बाज परन्तु इनसे पहले, इनके साथ एवं इनके बाद भी आज तक अनेक बाजों का आविष्कार किया गया परन्तु वह इन प्रमुख बाजों की तरह अपना स्थान न बना सके तथा इन्हीं में विलीन हो गये ।

इस प्रकार अठारहवीं शताब्दी से अनेक बाज आविष्कृत हुए तथा समय-समय पर सितार वादकों द्वारा सितार को उन्नत बनाने के लिए अनेक नए बाजों का आविष्कार किया गया एवं वादन शैली को परिष्कृत किया गया परन्तु प्रमुख बाज दो ही रहे। अन्य बाज तो इनके सहयोगी ही रहे। उनके द्वारा इन दो बाजों में ही वादन की भिन्नता के कारण जो परिवर्तन किया जाता रहा, उससे प्रमुख दोनों बाज सम्मिलित हो गए परन्तु फिर भी यह मूल रूप से भिन्न थे।आदि अनेक विषयों पर इस अध्याय में दृष्टिपात करेंगे।

अठारहवीं शताब्दी से आधुनिक समय तक कई बाजों का उल्लेख मिलता है। सर्वप्रथम यह तथ्य विचारणीय है कि गत शब्द कहां से आया अथवा इसकी कल्पना कहां से आयी ? इस सम्बन्ध में खोज करने पर ज्ञात होता है कि गत शब्द का प्रयोग नृत्य वादन शैली ही है। नृत्य में सितार वादन से पहले ही गत का प्रयोग किया जाता था। वास्तव में अगर गत के बोलों पर ध्यान दिया जाय तो यह बोल भी नृत्य के ही बोल हैं। सितार के प्रारम्भिक अवस्था की लघु चित्रकारी पर दृष्टि डाली जाय तो भी यह नृत्य की संगति का वाद्य ही प्रतीत होता है। यथा सितार की कोई गत उसके बोलों के आधार पर गाये दिड़, दा, दिड़, दा, ड़ा, दा, दा, ड़ा; दिड़, दा, दिड़, दा, ड़ा, दा, दा, ड़ा। इससे भी यह प्रतीत होता है कि कोई परन गाई जा रही है। आज भी सितार वादक अनेक परनों का प्रयोग करते हैं जिससे सितार पर नृत्य का प्रभाव स्वत: स्पष्ट होता है। नृत्य का स्पष्ट प्रभाव दिखाने के लिए मिज़राब के बोलों का वज़न बराबर होना चाहिये। 'गत' शब्द भी नृत्य से ही सितार की वादन शैली में प्रयुक्त किया गया है।

सर्वप्रथम सितार की गतों का निर्माण अथवा उसकी निबद्ध सामग्री का निर्माण करने का श्रेय फिरोज खां को जाता है। क्योंकि इन्हीं की बनायी हुई

फिरोजखानी गतों का उल्लेख सबसे पुराना है तथा इसी समय से सितार पर बजने वाली सामग्री प्रकाश में आयी । हरिश्चन्द्र श्रीवास्तव के द्वारा इस सम्बन्ध में लिखे हुए वक्तव्य से भी उपर्युक्त तथ्य की पुष्टि होती है । इनके अनुसार[९] "सितार वादन के बाज को सर्वप्रथम एक निश्चित रूप देने वालों में फिरोज खां का नाम आता है । क्योंकि सर्वप्रथम इन्होंने सितार पर बजने के योग्य सामग्री वादकों को दी । इस दिशा में फिरोज खां का नाम उल्लेखनीय है । उन्होंने चार ताल में गत की एक विशिष्ट शैली को जन्म दिया । यह गत बजाने की शैली क्रमश: फिरोजखानी गत तथा फिरोजखानी बाज कहलायी । इस गत के साथ पखावज का प्रयोग होता था । गत के बोल भी निश्चित थे ।"

उन्नीसवीं शताब्दी तथा बीसवीं शताब्दी के लिखित साहित्य पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि मुख्यत: फिरोजखानी गतें मध्य लय की ही होती हैं ।[१०] विलम्बित अथवा द्रुत लय में बजाने पर (उसकी) मधुरता नष्ट हो जाती है । फिरोजखानी बाज में गतों के बोल कठिन होते हैं । इस बाज की विशेषता यह है कि इसमें राग की पूरी गंभीरता का प्रदर्शन होता है । मीराते देहली में वर्णित न्यामत खां के भाई द्वारा बजाया जाने वाला सितार (सहतार) का उल्लेख पढ़ने से भी फिरोज खां की वादन शैली का साक्ष्य मिल जाता है । इसमें वर्णित उल्लेख से यह स्पष्ट ज़ाहिर होता है कि फिरोज खां की वादन शैली उस समय में एक बहुत बड़ा आश्चर्य थी ।[११] दरगाह कुली खां के अनुसार[११] "+ + + + ये सहतार बजाने में इतने निपुण थे कि इन्होंने इसे बजाने का एक नया तरीका निकाला था, जो चीज बड़े-बड़े तंत्र वाद्यों पर बजती थी, वो उससे बढ़िया अपने सहतार पर बजाते थे । यह दुनिया का एक बहुत बड़ा आश्चर्य था । + + + जब सहतार पर गाते हैं तो दिल चीर कर रख देते हैं ।" आदि वर्णन यह स्पष्ट कर देता है कि फिरोज खां की वादन शैली वास्तव में श्रेष्ठ थी । परन्तु आधुनिक समय में फिरोजखानी बाज का अधिक प्रचार न होने का कारण

मात्र मसीतखानी बाज में किए गए परिवर्तन एवं उसकी प्रचलितता है ।

पंडित जगदीशनारायण पाठक इस बाज के सम्बन्ध में कहते हैं कि[१२] यह वाद्य शैली ख्याल अंग की थी । इसमें मींड, गमक आदि का प्रयोग अधिक होता था ।' इससे ऐसा जान पड़ता है कि इस बाज में अलंकरण के साधनों का भी प्रयोग प्रारम्भ हो गया था । इस सम्बन्ध में ब्रिजेन्द्र किशोर राय चौधरी के विचार भी उल्लेखनीय हैं क्योंकि बी०के० राय चौधरी ने सितार का आविष्कारक अमीर खुसरो को बताया है । इस आधार पर वह निम्न विचार व्यक्त करते हुए उदाहरणस्वरूप गत भी दे रहे हैं[१३] जिसके संबंध में स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि यह गत अमीर खुसरो की हो नहीं सकती है । क्योंकि अठारहवीं शताब्दी से पूर्व न तो सितार की स्वतंत्र वादन शैली का ही साहित्य में कोई वर्णन है, न ही अमीर खुसरो सितार के आविष्कारक ही हैं (जैसाकि पिछले अध्याय में सिद्ध कर आए हैं) । बी०के० राय चौधरी के अनुसार[१३] 'इस बाजन की गत में मात्र एक तुक या चरण रहता था एवं सामान्य तोड़ों का व्यवहार होता था । अमीर खुसरो प्रवर्तित बाज का उदाहरण आज भी कायम है । जैसे काफी की चिरपरिचित गत --

सा रे रे रे गु — मा पा मा पा — पा मा गु रे सा नी

डा डे रे डा रा — डा रा डा रा - डा रा डा रा डा रा

संभवत: यह फिरोज खां की बनायी गत का एक काफी अच्छा उदाहरण हो सकती है क्योंकि फिरोज खां के वादन में मध्य लय का प्रयोग होता था इसलिये यह उस समयकेसितार संगीत से काफी मेल खाती है । अठारहवीं शताब्दी से पूर्व सितार के एकाकी संगीत पर उतना ध्यान नहीं दिया जाता था जितना कि सितार के ध्रुपद अंग पर । मधुर बोलों का प्रयोग, एक तार से दूसरे तार पर एवं एक सप्तक से दूसरे

सप्तक में शीघ्रता एवं सफाई से जाना, फिरोज खां का अपना एक अलग ही तरीका था। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि फिरोज खां ने सितार को एकाकी वाद्य के रूप में विकसित होने में बहुत महत्वपूर्ण योगदान दिया। इनके द्वारा अपने भाई के बाज को भी सितार में शामिल किया गया जैसाकि मीराते देहली के अनुसार न्यामत खां सदरंग एक बहुत अच्छा बीन नवाज़ था[१४] तथा 'लेटर मुगल्स' के अनुसार वह तंबूर वादन में प्रवीण था[१५]। फिरोज खां ने अपने भाई न्यामत खां की सहायता से एवं उनके ज्ञान से लाभान्वित हो सितार की बहुत तरक्की की। सितार वादन के क्षेत्र में फिरोज खां की देन अद्वितीय है। क्योंकि इन्हीं के द्वारा बाज की नींव रखी गयी जिसके कारण क्रमश: उन्नति को प्राप्त होता हुआ सितार आज संसार का श्रेष्ठ वाद्य बन गया है।

फिरोजखानी बाज का परिष्कृत रूप आगे चलकर मसीतखानी बाज के रूप में प्रचलित हुआ। मसीतखानी बाज को 'पश्चाव का बाज' अर्थात् 'पश्चिमी बाज' भी कहा जाता है।[१६] मसीतखां ने ध्रुपद शैली पर आधारित सितार की वादन शैली के लिए कुछ रचनाएं कीं। इस संदर्भ में एस० बन्दोपाध्याय का मत है कि 'मसीत खां ने विलम्बित लय में कई ध्रुपद रचनाओं को सितार पर बजाने के लिये अपनाया।[१७] इस बाज के अत्यधिक प्रचलन का मुख्य कारण यही था कि इस समय तांत की जगह धातु के परदों का व्यवहार शुरू हो गया था जिससे कि इस बाज में वादन के लिये क्षेत्र विस्तृत हो गया।[१८] इस बाज में ध्रुपद की मधुरता की नींव रखी गयी तथा बीन की वादन शैली के समावेश से वादन में निखार आ गया।

मसीतखानी बाज में दांए हाथ के प्रयोग पर अधिक बल दिया गया फिर बांया हाथ भी काफी प्रयोग में लाया गया और दो स्वरों के बीच मींड बजाने का काम बांए हाथ को सौंप दिया गया।[५] मसीतखानी बाज विलम्बित ख्याल के आदर्श के आधार पर ही बना और इसमें जोड़, तोड़ा एवं विस्तार आदि का व्यवहार होता था।

इसके विषय में बताते हुए वी॰ के॰ राय चौधरी कहते हैं कि यह गत तत्कालीन ख्याल गायकी में बजती थी । गत, तोड़ा एवं विस्तार सब ख्याल की शैली में संपादित होते थे । मसीत खां की सितार पर प्रवर्तित मसीतखानी गत की धारा-वादित वादन शैली अथवा वाद्य वस्तु की धारावाहिकता दी जा रही है ।[१६]

(१) मसीतखानी गत की बंदिश में संयुक्त बोलों का व्यवहार नहीं है । मुख्यत: विलम्बित त्रिताल में मसीतखानी गत की रचना हुई है । बोलों का उदाहरण निम्न है :--

(डेरे) ।[?]। डा डेरे डा रा ।[+] डा डा रा डेरे ।[3] डा डेरे डा रा ।

[0] डा डा रा डेरे । [2] डेरे डेरे डा रा । [+1] डर डा रा ।

[3] डा डर डा रा । [0] डा डा रा डेरे ।

उपर्लिखित गत के प्रथम आवर्तन को स्थायी धातु कहा जाता है एवं द्वितीय आवर्तन को वर्तमान काल में `मंझा` कहा जाता है । स्थाई एवं अन्तरे के मध्यवर्ती धातु होने के कारण इसका नाम `माझा` हुआ । इसका अर्थ है मध्यवर्ती । इसके बाद गत का अन्तरा बजाने की रीति है । अन्तरे के बोल --

(डेरे) ।[3] डे डेरे डा रा । डा डा रा डेरे ।[1] डा डेरे डा रा ।

डा डेरे डा रा । [3] डा डेरे डा रा ।[0] डा डा रा डेरे

स्थाई, मंझा एवं अन्तरा बजाने के पश्चात राग के अंश स्वर के आधार से स्वर विस्तार किया जाता है, बाद में अंश स्वर के संवादी स्वर और उसके बाद राग के विशिष्ट पद-विन्यास का आधार लेकर स्वर विस्तार किया जाता है । इसके बाद छोटी और बड़ी तानें बजाई जाती हैं । मसीतखानी गत की तानें अधिकांशत: खाली

की तीसरी मात्रा पर समाप्त कर चतुर्थ मात्रा से गत की स्थाई ली जाती है । मसीत खानी गत में केवल ठेके का ही व्यवहार था । संगत में परन आदि बजाने की रीति नहीं थी । चिकारी का तार ना होने के कारण खाले का काम भी नहीं था । मसीतखानी बाज में आलाप के द्रुत जोड़ के अनुकरण से ही जोड़ की व्यवस्था थी और यही मसीतखानी वादन शैली का अंतिम अंग था[1] इस सम्बन्ध में अरविन्द पारिख लिखते हैं[4] कि 'मसीतखानी गतें तीन ताल तथा विलम्बित लय में बांधी गईं' । प्रयोग किए जाने वाले बोलों का क्रम 'दिर दा दिर दा रा दा दा रा, दिर दा दिर दा रा दा दा रा, इस गत का ठोस रूप था और यह इस दृष्टि से पूर्ण थी कि इसमें स्थायी और अन्तरा पूरी तौर से पेश किया जा सकता था । गत के बाद विलम्बित लय में तोड़े पेश किये जाते थे । तोड़े पखावज व तबले पर बजने वाली परनों के आधार पर तैयार किये जाते थे । मसीत खां ने दांए हाथ से बजने वाले बोलों के महत्व पर जोर दिया । यद्यपि उन्होंने बांए हाथ को अधिक प्रमुखता दी । बांए हाथ से अब ख्याल की मुरकियां और कभी-कभी दो स्वरों की मींड की जाने लगी ।'

इन उल्लेखों से स्पष्ट हो जाता है कि मसीतखानी बाज में तीन ताल का ही प्रयोग किया जाता था तथा इसके बोल निश्चित होते थे । गत में एक ही प्रकार के मिज़राब के बोल दो भागों में थे जैसे दिर दा दिर दा रा दा दा रा तथा इन्हें बारह मात्रा से ही उठाया जाता था । इसे बारहवीं मात्रा से उठाने का ही नियम आजतक विद्यमान है । साधारणत: यह सोचा जाता है कि इनके दोनों भागों में बोल समान होते हुए भी यह इतनी अधिक लोकप्रिय कैसे होगयी ? बारहवीं मात्रा से उठान होने के कारण मुखड़ा लेना बहुत आसान होता था, यही इसकी प्रमुख विशेषता थी जिसके कारण आज तक इसका स्वरूप अन्य बाजों से पृथक है । उस समय सितार में जिस तरह के तोड़ों का बाज होता था, उन तोड़ों को मसीतखानी बाज में आसानी से बजाया

जा सकता था । इस बाज के क्रन्द को बनाए रखते हुए तोड़े बजाने में वादक को किसी प्रकार की कठिनाई नहीं होती थी । इसमें मुख्य बोल को आधार मानकर ही उसको भरते थे जैसे दिर दिर दा रा दिर दिर दा रा, दिर दिर दा रा दा रा दा रा या दारा दिर दिर दारा दारा, दारा दिर दिर दारा आदि । कुशल वादक स्वेच्छा से उन्हीं क्रन्दों को आगे पीछे करके अनेक क्रन्द बजाकर मुखड़ा पकड़ लेते थे । इसमें यह बात ध्यान देने योग्य है कि सम, खाली, पहली एवं पांचवीं मात्रा पर सदैव दा का बोल पड़ता है । मसीतखानी वादन पद्धति में तोड़े एवं तानें बजाने के बाद मुखड़ा पकड़कर सम पर आना बहुत ही सुन्दर प्रतीत होता है । कभी-कभी सादगी एवं सरलता में भी बहुत आकर्षण होता है । यह तथ्य मसीतखानी बाज के सम्बन्ध में खरा उतरता है । यह आवश्यक नहीं है कि हर समय क्लिष्ट एवं पेचीदा चीजें ही श्रेष्ठ हों । मसीतखानी बाज का सौन्दर्य ही उसके सादा एवं सरल वादन में है । इस बाज के अन्तर्गत फैलाव इतना अधिक है कि वादक जितना चाहे बजा सकता है । इस सम्बन्ध में सैयद सफदर हुसैन खां देहलवी लिखते हैं[१६] कि " + + + + सुबहान अल्लाह, उसका क्या कहना है कि इसमें सब तरह का बाज बजता है और फैलाव भी इस कद्र है कि जब तक जी चाहे इस गत को बजाए जाओ । मियां बहादुर खां वलद मियां मसीत खां ने इस सितार को और ही ढंग पर कर दिया । बीन के तोड़े सितार में भर दिए और अपनी शागिर्द खास बीबीजान को सिखा दिए, वाक़ई इसका बजाना मुश्किल है ? "

इस उद्धरण से यह प्रतीत होता है कि मसीतखानी बाज में उनके पुत्र बहादुर खां द्वारा जो कि बीनवादक थे, सितार में क्लिष्टता का समावेश किया गया क्योंकि सफदर हुसैन खां इसे मुश्किल बता रहे हैं जबकि मसीत खां द्वारा आविष्कृत मसीतखानी बाज बहुत ही सरल एवं अल्पआयास साध्य था । आगे कहे गए उल्लेख से यह और भी

स्पष्ट हो जाएगा । "" मजीद खां के पुत्र मियां बहादुर खां ने इस सितार को और ही ढंग पर कर दिया है । वह बीन का अर्थ है । जब उनके हाथ में किसी कारण दुख पहुंचा तथा बीन ना बजा सके तो बीन के तोड़े सितार में भर दिये और मुख्य शिष्या बीबीजान की जो दिल्ली की थीं, सिखा दिये । इनके वादन में तोड़े ठाह्न और आड़ और किवाड़ और गमक और सूत और तान और मिज़राब आदि के बजते थे । सितार की हर गति में १६, ३२ या ४८ बोल होते हैं तथा उनके साथ ठेके की ताल बजती है । ""[१६]

उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि इस समय बहादुर खां द्वारा बीन की जटिल वादन शैली का भी सितार वादन में समीकरण किया गया जिससे उसमें कठिनता का समावेश हुआ । इसे मसीतखानी बाज की ही दूसरी सीढ़ी कहना उचित होगा जिस पर चढ़ना अपेक्षाकृत कठिन था । बहादुर खां की कई गतों का संग्रह सादिक अली खां द्वारा रचित 'सरमाय: इशरत' में भी मिलता है ।[२०] इस समय गतों को लिखने की प्रणाली भी भिन्न थी, सितार के परदों के नम्बर, मिज़राब के बोल एवं ताल चिह्न के संयोग से गतों को लिखा जाता था । प्रस्तुत उद्धरण में सादिक अली खां बहादुर खां की दरबारी कान्हड़ा की गत लिखते हुए कहते हैं[२०] कि -- " दरबारी कान्हड़ा के थाट कान्हड़ा का ताल त्रितालें की । बोल हैं -- दिर दा दिर दा रा दा दा रा दिर दा दिर दा रा दा दा रा दिर दा दिर दा रा दा दा रा । गत के बाद तोड़े, पल्टे आदि भी दिए हैं । बहादुर खां की उपर्युक्त तीन ताल की गत के बाद दो दरबारी की ही गतें अलग तालों में हैं फिर कामोद, थाट यमन का ताल त्रिताला, तिलककामोद, थाट यमन का ताल त्रिताला, गत केदार की थाट यमन का ताल त्रिताला आदि इसी प्रकार से देसी, नट क्षाया (क्षायानट), यमन, हमीर, जयजयवन्ती, श्री, धनाश्री, मालश्री, मारवा आदि रागों की गतें दी गयी हैं । "

इन सबके अध्ययन से प्रतीत होता है कि बहादुर खाँ के द्वारा मसीतखानी बाज में कुछ परिवर्तन किया गया था जिससे कि यह बाज उस समय कठिन कहलाया गया। मसीतखानी बाज में एक पूर्णता थी। आज भी इसकी तानें प्राय: सम पर खत्म न करके ग्यारहवीं मात्रा पर खत्म करके बारहवीं मात्रा से मुखड़ा लेकर सम पर आना बहुत ही खूबसूरत लगता है। उदाहरणस्वरूप पूरिया कल्याण का तोड़ा देखिए[२१] --

१.	नी-रे-ग-मे-	ग--ग,गग,गग,	गगग,गगग,गग
	मेगरेसनीरेस-	स--------	नी रे स नि ध नी ध-
	नी रे गमेगरेस -	नीरेरे, नीगग, रेमे	मे, गधध, मे नी ध से
	नीरेसनी धनीधप	मेधप मेग मेग -	मेग रेस निरेगम
	पमेगमे गरेस-	रे-ग-मे-प-	ग----मेगरेस
	निरेगमे पमेगमे	गरेस-रे-ग-	मे-प-ग-----
	मेगरेस नी रे गमे	पमेगमेगरेस-	फिर,रेगमेप से मुखड़ा प्रारम्भ हो जाता है।

मसीतखानी बाज का वादक उसी बाज में वादन की समस्त विशेषताओं को प्रकट करता था। मसीत खाँ द्वारा रचित बाज बहुत ही मधुर एवं अच्छा निकला इसी के फलस्वरूप इनके सितार वादन का एक घराना चल पड़ा। इस बाज को जिन उस्तादों ने अपनाया, वे मसीतखानी घराने के उस्ताद माने गये। मसीतखानी बाज को दिल्ली बाज कहकर भी संबोधित किया गया है। सादिक अली खाँ देहली बाज के संबंध में कहते हैं[२२] कि इसका बाज देहली का कि वो मंसूब मसीत खाँ व बहादुर खाँ से है। और सिफ़त उसकी यह है कि कुल गतें ठाट में हैं। मींड और मांड और ठोके और झारे से मिस्ल बीन के बजाए जाते हैं और फिर उसमें इन और आड़ और कुवाड़

बड़ाड़ ले लेते हैं । ये बाज मुश्किल है और इसमें राग का रूप खूब जाहिर होता है ।' इसके बाद लेखक ने देहली बाज के बोलों को भी उद्धृत किया है[२२] -- ' देहली बाज की गत के बोल होते हैं --डड़ डा डड़ डा ड़ा डा डा ड़ा डड़ डा डड़ डा ड़ा डा डा ड़ा ।

उपर्युक्त उल्लेखों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्रारंभिक मसीतखानी बाज बहुत सरल बाज था जो कि आसानी से किसी नए सीखने वाले की समझ में आ सकता था । इसके साथ ही इस बाज की एक और विशेषता यह थी कि इसकी जितनी गहराई में जायें, यह उतना ही कठिन था अथवा कह सकते हैं कि इसका विस्तार उतना ही अधिक किया जा सकता था । यह विलम्बित लय का बाज था जो कि सरलता से बजाया जा सकता था । बहादुर खां द्वारा इस बाज में कुछ बीन की जटिलताएं भरी गयी जिसके कारण सैयद सफदर हुसैन एवं सादक अली खां ने बहादुर खां के संदर्भ में इस बाज की चर्चा करते समय इसे कठिन बताया है ।[१६,२२] इस बाज के बोल समान ही थे, वे आज तक उसी प्रकार प्रचलित हैं, केवल उच्चारण में भिन्नत्व आया है । आधुनिक समय में ड़ा की जगह दा रा कहना आरम्भ हो गया है ।

मसीतखानी गतों को बजाने वाले वादकों में से प्यार खां भी एक श्रेष्ठ सितार वादक हुए हैं । प्यार खां की आसावरी राग की गत इस प्रकार है[२३] --

स्थाई ० ३ × २
- - - - पप । ध प रे रे रे मम । ध ध प मम । प धध ध म
डिर । डा रा डाडिर डारा । डा डा रा डिर । डा डिर डा रा

०
। ग रे स
। डा डा रा

अन्तरा ० ३ × २
- - - मम । प धध सं सं । ग गं रें सं । रे मम पध पमप
डिर । डाडिरडारा । डाडिरडारा । डा डिर डा रा

०
। ग रे स
। डा डा रा

उपर्युक्त गत पर दृष्टि डालने से ज्ञात होता है कि यह गत भी आधुनिक समय में बजायी जाने वाली मसीतखानी गत की तरह ही है। इस समय मंझा वाले भाग का भी वादन होता था तथा स्वरों के लगाव के अनुसार बोलों में कुछ अन्तर किया गया है।

मसीत खां के पश्चात् अनेक कलाकारों ने मसीत खानी बाज में थोड़ा बहुत परिवर्तन किया परन्तु उसका मूल आधार यही मसीतखानी बाज ही रहा। मसीतखां के बाद के रहीम सैन आदि ने स्वयं को सेनी कहना प्रारम्भ किया तथा अपनी वादन शैली को सैनी नाम से संबोधित किया जबकि इनसे पहले तानसेन के वंशजों द्वारा स्वयं को कभी सैनी नहीं कहा गया।[२४] रहीम सैन एवं अमृत सैन से मसीतखानी बाज को सैनी बाज कहने की प्रथा प्रारम्भ हुई।

सैनी बाज का विवेचन सुदर्शनाचार्य ने बहुत विस्तार से किया है। इन्होंने बताया है[२५] कि मसीतखानी गतें बड़े-बड़े दिमागों की उपज थीं तथा इनमें राग के सभी प्रकार बहुत ही मधुरता से प्रस्तुत किये जाते थे। आज सितार वीणा से भी ज्यादा ख्याति प्राप्त वाद्य है क्योंकि यह वीणा से ज्यादा पूर्ण है तथा इसमें गतों एवं तोड़ों की मधुरता के बराबर आलाप भी बजाया जा सकता है। चिकारी के तारों का सितार में पड़ जाने से उसमें एक और गुण आ गया जिसकी वजह से इसने धीरे - धीरे वीणा का स्थान ले लिया। रहीम सेन एवं अमृत सेन ने पहली बार सितार पर जोड़ और उसके बाद गत तोड़े बजाए।

ख्याल गायन के प्रचलन होने से सैनी कलाकार भी इसके प्रभाव से वंचित न रह सके। वाद्यों में ख्याल का विशेष प्रकार 'फिकराबन्दी' बजाई गई। इसमें छोटे-छोटे तोड़े और कई प्रकार के बहुत ही मधुर बोल, गत के खत्म होने के समय बजाए जाते थे। रहीम सेन एवं अमृत सेन ने सितार वादन में ध्रुपद एवं वीणा का काम भी काफी मात्रा

में दिखाया। इनका वादन शुद्ध होता था। फिकराबन्दी का सेनिया बाज में काफी प्रयोग किया गया। रहीमसेन एवं अमृतसेन के विषय में कहा जाता है कि ये पिता-पुत्र थे परन्तु इनके वादन से भ्रम हो जाता था। क्योंकि अमृतसेन ने अपने वादन में रियाज़ करके अपनी आयु की तुलना में काफी प्रसिद्धि प्राप्त कर ली थी। इन्हीं के समय से वादन में जुगलबंदी का अभ्युदय हुआ। रहीमसेन और अमृतसेन की जोड़ी बहुत मशहूर थी।[२६] इनके समय की सेनिया घराने की कुछ गतें सुदर्शनाचार्य ने लिखी हैं जो निम्नलिखित हैं --

राग यमन[२६]

स्थाई ० - - - गग | ३ रे सस नि स | × रे ग रे ग | २ मे ग पप मे | ० गग रे स
डिड | डा डिड डाडा | डा डाडाडा | डाडाडिडडा | डिड डाडा

राग यमनी कल्याण[२७]

स्थायी

---

० - - - नीनी | ३ घ मेमे ध प | × ग म ग रे | २ रे ग ग पप | ० ग रे स
डिड | डा डिड डा ड़ा | डा डा डा डा | डा ड़ा डाडिड़ | डा डा डा

राग सोरठ[२८]

× स पप नि स | २ रे रेरे प म | ० ग रे स सस | ३ रे मम प नी
डा डिड डा ड़ा | डा डिड डा ड़ा | डा डा डा डिड़ | डा डिड़ डा ड़
सं रेंरें सं नी | म पप ध म | म ग रे पप | म गग नी स
डा डिड़ डा ड़ा | डा डिड़ डा ड़ा | डा डा ड़ा डिड़ | डा डिड़ डा ड़ा

उपर्युक्त सेनी बाज की गतें सामान्यत: मसीतखानी बाज के समान ही हैं, केवल इनके बोल ही कहीं-कहीं भिन्न हो गए हैं। इसी प्रकार सादिक अली खां द्वारा अपनी पुस्तक में अनेक गतों का संग्रह है। इन्होंने स्वयं निर्मित अनेक गतों के साथ रहीम सेन की भी गत दी है।[२६] इनका वर्णन निम्न प्रकार है -- 'दूसरी गत - गत सिंधु भैरवी की थाट काफी ताल त्रिताला की, मरहूम रहीम सेन साहब।

दा दिर दा रा दा दिर दा रा दा दा रा
+३ २ ३ २ ३ ६

दिर दा दिर दा रा
८ ७ ४ ३ २

तोड़ा गत के सम से आरम्भ करो, फिर सम पर आकर गत में मिल जाओ।' इसके बाद कई तोड़े भी लिखे हैं। यहां यह बात ध्यान देने की है कि इनकी पुस्तक में सितार का चित्र बना हुआ है और उस पर परदों की संख्या पड़ी हुई है तथा गत लिखते समय स्वर लिखने की जगह परदों की ही क्रम संख्या द्वारा संकेतित किया गया है।[२६] इन्होंने रहीम सेन की बजाई पूरिया, सूहा आदि रागों की गतें भी लिखी हैं।

पं० सुदर्शनाचार्य शास्त्री के अनुसार[३०], जो तोड़ा गत की विधि में सितार पर टेढ़ा मेढ़ा बजाया जाता है, उसे फिकराबंदी कहते हैं।' यह ख्याल एवं क़व्वाली के आधार पर बनाया गया है। सेनिया कलाकारों ने एक स्वर के तोड़ों की तानों को जानबूझ कर नहीं बजाया, ये तानें आजकल काफी प्रचलित हैं। इनकी तानें जो वह हल्की मूसीक़ी के लिए बजाते थे, काफी मधुर होती थीं। मिज़राब इसमें काफी प्रयोग होता था तथा आज हम इन्हें सेनिया की कर्मशीद तानें कहते हैं। ये तानें फिकरों के बाद बजायी जाती थीं, फिकरों में ये कर्मशीद तानें काफी लम्बी होती थीं तथा अक्सर पूरी डांड का प्रयोग होता था। इन तानों को अक्सर थोड़ा रुककर

या मध्य स पर खत्म किया जाता था । बाद के सेनिया कलाकारों ने निम्न लिखित पश्चिमी बाज अपनाया । गत के चार भाग बजाने के बाद कलाकार गत विस्तार करता था । इसके बाद गत उपज जो तुलना में गत विस्तार से संबंधित होती थी, बजायी जाती थी । यह गत को बिगाड़े बिना राग का और विस्तार करती थी तथा इसके बाद फिकरा और खुर्शीद तानें बजायी जाती थीं । कुछ सेनिया कलाकार वीणा के अंग भी जैसे लड़ी, लड़ुगुथाव, लाड़ लपट आदि भी अपना कार्यक्रम खत्म करने से पूर्व बजाते थे । सेनिया के नाम से मसीतखानी बाज बजाने वालों में अमृतसेन की बहुत प्रसिद्धि है । शुद्धता इनके वादन की प्रमुख विशेषता है । सेनी बाज के कलाकारों द्वारा राग के सूक्ष्मतम सौन्दर्य को बहुत ही खूबी से उद्घाटित किया जाता था । अमृत सेन की बजाई हुई गुजरी तोड़ी की गत[34] पर ध्यान देने से इनके बाज की कुछ विशेषताएं पता की जा सकती हैं --

स्थाई :--

० ३ × २ ०
- - - घुध । सं नीध मे गग मंम । घं नी सं संसं । नीं घुध मं ध । रेंग रेस
डिर । डा डिर डा डिर डारा । डा डा रा डिर । डा डिर डा रा । डा डारा

अन्तरा :-

० ३ × २ ०
- - - सरे । सरेंग रेंरें स स । धं नींनी स स । रें गग मं ध । मेंधध मग रेंस
डिर । डा डिर डारा । डा डिर डा रा । डा डिरडारा । डाडिर डाराडारा

उपर्युक्त गतों का अध्ययन करने से केवल यही अनुमान लगाया जा सकता है कि उस समय की गतों का क्या स्वरूप था । परन्तु इन गतों से किसी कलाकार की वादन शैली का जानना मुश्किल ही है । सभी सेनियों की गतों में बोलों का कुछ हेरफेर अवश्य मिलता है, अन्य किसी प्रकार का संकेत नहीं मिलता । परन्तु यह सत्य है कि सेनियों

द्वारा जो बाज अपनाया गया वह कठिन अवश्य था रहीमसेनके वादन के सम्बन्ध में कहा जाता है कि छह राग एवं छत्तीस रागिनियां उनके वाद्य के तारों की गुलाम थीं।[३२] सुदर्शनाचार्य के अनुसार रहीमसेन के गत व तोड़े ध्रुपद व ख्याल के स्थाई एवं अंतरे की प्रेरणा ही थी। इस प्रकार रहीम सेन का वादन केवल ध्रुपद एवं बीन का ही अनुकरण नहीं था, उसकी गतों में एक अपनी अलग दुरूहता एवं कठिनता भी थी। यही कारण है कि सुदर्शनाचार्य उनकी गतों को बहुमूल्य हीरों की संज्ञा देते हैं। इनके अनुसार रहीमसेन की गतें मींड़ से भरी हुई थीं। उसे ठीक प्रकार से बजाना कोई आसान बात नहीं थी। इनके पूर्व की गतें केवल ध्रुपद पर ही आधारित थीं। इन्होंने जोड़ालाप का वादन, कठिन गत एवं तोड़ों के समावेश से वास्तव में इसे दिव्यमणि के रूप में कर, इसके वादन में वीणा, ध्रुपद, धमार, बीन एवं ख्याल आदि सभी की विशेषताओं को ओतप्रोत कर दिया।

सितार के बाज के विकास में रहीम सेन एवं अमृतसेन के पश्चात निहाल सेन एवं अमीर खां ने भी काफी महत्वपूर्ण योगदान दिया है। अमीर खां के द्वारा बजाई गई वादन शैली को अमीरखानी बाज कहा गया। इसके विषय में जगदीश नारायण पाठक कहते हैं[३३] कि 'अमीर खां ने एक स्वतंत्र सितार की वादन शैली प्रचलित की जो अमीरखानी बाज के नाम से प्रसिद्ध है।'

अमीरखानी बाज में गत मध्य लय में बजाई जाती थी, परन्तु बोल मसीतखानी जैसे ही होते थे। इनके प्रभावशाली बादन के सम्बन्ध में कहा जाता है कि इन्होंने अपने बाज में कोई खास परिवर्तन नहीं किया। परन्तु इनके वादन के साथ कई आश्चर्यजनक कहानियां बतायी जाती हैं यथा -- बुखार दूर हो जाना, प्रकृति में कुछ अजीब सी चीजों का उत्पन्न हो जाना जोकि तानसेन एवं उनके साथी संगीतकारों के विषय में कही जाती थीं। ग्वालियर में जगह जगह पर इनका बाज अमीरखानी बाज के नाम से विख्यात है। परन्तु इनका बाज मसीतखानी से कुछ खास अलग नहीं था तथा उतना प्रभावशाली भी

नहीं था। यही कारण है कि इनका बाज भी मसीतखानी बाज में ही विलीन होगया। अमीरखानी बाज के उदाहरणस्वरूप फज़ल हुसैन की निम्नलिखित बंदिश को देखा जा सकता है[३४]:--

तिलक कामोद, मध्यलय, तीनताल[३५]

स स	० रे - - प -- म-	३ ग -स रेग रे	× ग - - -	२ - -
दा रा	दाऽ ऽदाऽऽदाऽ	राऽदा रदादा	रा ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ
प़ प़	प़ नी -- नी-	स- -स -- रे-	ग - - -	- -
दा रा	दा ऽरा ऽऽ दा	राड़ ऽदा ऽऽ राऽ	दा ऽ ऽ ऽ	ऽ ऽ

उपर्युक्त प्रकार की गतों का वादन अमीरखानी बाज में ही एक परिवर्तन था। इन वादकों के द्वारा रजाखानी वादन शैली को भी मसीतखानी वादन शैली के साथ ही प्रयोग किया गया। ये गतें मध्य लय में हैं तथा इन पर मसीतखानी का तो प्रभाव है ही रजाखानी बाज का प्रभाव भी है। इनमें जिन बोलों का प्रयोग किया जा रहा है, वह भी दोनों बाजों के सम्मिलित रूप हैं। यथा न तो दिर दा दिर दारा वाली ही बात है, और न ही दाऽ ऽदा ऽरदाऽ दिर दिर दारा ही है। फज़ल हुसैन के द्वारा इस राग में बहुत ही सुन्दर बोलों का प्रयोग किया गया है तथा इनके वादन में स्वर-माधुर्य भी बहुत है। इन्होंने इस रिकार्ड में पहले व्यवस्थित एवं क्रमिक आलाप का वादन किया है। इसमें सम दिखाते हुए तानों का प्रयोग एवं जोड़ आले के वादन के उपरान्त तीनताल में उपर्युक्त तिलक कामोद की गत बजायी गयी है। यह अमीरखानी बाज का ही कुछ विकसित रूप है। इस प्रकार अमीरखानी बाज भी मसीतखानी बाज से खास भिन्नत्व रखने वाला बाज न होने के कारण मसीतखानी बाज में ही विलीन हो गया। मसीतखानी बाज के आविष्कृत होने से सितार पर बजने वाली सामग्री को एक निश्चित आधार मिला क्योंकि इसमें गतों के बोल निश्चित होते थे एवं स्थाई, अन्तरा दो

भागों में गत का वादन किया जाता था । उसके बाद धीमी लय में तोड़े बजाए जाते थे । तोड़ों को तबले या पखावज की पर्नों पर बजाया गया । मसीत खां ने सीधे हाथ से बजने वाले बोलों की काफी उन्नति की जबकि रहीम सेन एवं अमृत सेन ने उल्टे हाथ की तकनीक में काफी सुधार किया । इनके द्वारा उल्टे हाथ का काम एवं राग के प्रदर्शन में शुद्धता का समावेश हुआ ।

सेनी बाज के बजाने वालों में बरकतउल्ला खां का स्थान भी महत्वपूर्ण है । इन्होंने सेनिया बाज के अधिकारी कलाकार अमीर खां से सितार वादन की शिक्षा प्राप्त की थी । सेनी बाज के वादक अपनी कला को अपने परिवार से बाहर किसी को नहीं देते थे । यही कारण था कि बरकत उल्ला ने उनके द्वारा सीखी हुई सामग्री बजाई परन्तु संभवत: उनसे संतुष्ट न होने के कारण अपने वादन में रजाखानी बाज को भी सम्मिलित करके पूर्णता अनुभव की । यह पहले सेनी बाज के सितार वादक थे जिन्होंने मसीतखानी बाज के साथ रजाखानी बाज को भी बजाने की प्रथा का प्रारम्भ किया । इनके बाद से लगभग सभी कलाकार मसीतखानी बाज के साथ रजाखानी बाज भी बजाने लगे । बरकतउल्ला खां के द्वारा बजाया गया मात्र भूप कल्याण का रिकार्ड ही प्राप्त होता है[३५] जिससे इनके समय की सेनी बाज की विशेषताओं का आभास हो सकता है--

भूपकल्याण, मसीतखानी गत, तीनताल

०	३				×				२				०		
- - - गग	रे	सस	ग	रे	गप	प	ग	रेरे	ग	पप	घ	प	ग	रे	स
- - -डिर	डा	डिर	डा	रा	डाड़	डा	रा	डिर	डा	डिर	डा	रा	डा	डा	रा

सेनी बाज के वादकों में अगर देखा जाय तो वास्तव में सेनी बाज अमीर खां के बाद विकसित नहीं हुआ । परन्तु कुछ सेनी बाज की विशेषताओं के साथ ही उसमें रजाखानी बाज को मिलाकर बजाने में बरकतउल्ला खां ने काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । बरकतउल्ला खां की वादन पद्धति का अनुकरण इनके शिष्य आशिक अली खां

ने किया । परन्तु इन्होंने सितार वादन में कोई खास प्रसिद्धि प्राप्त नहीं की । इनकी सितार पर बजाई हुई राग यमन कल्याण की गत निम्नलिखित है :--

०	३	×	२	
-गग रेरे गग	रे रेनि -नि रे	गमे प मे ग	मे घध नीनी सर्सं	
-डिर डिर डिर	डा रडा डर डा	डिर डा डा रा	डा डिर डिर डिर	
०	३	×	२	
धनी -मे मेग	गमे प मे ग	रेग मे ग रे	नी रे स -	
डाड sड राडा	डाड s डा रा	डाs -- डा रा	डा रा डा s	

आशिक अली खां के पश्चात सेनी बाज उनके पुत्र मुश्ताक अली खां के द्वारा बजाया गया । जैसाकि पहले ही बताया जा चुका है कि वास्तव में असली सेनी बाज अमीरखाँ तक ही रहा, उन्होंने बरकतउल्ला को अपने घराने की असली सामग्री नहीं सिखाई, परन्तु फिर भी क्यों कि बरकत उल्ला ने अमीर खाँ से सीखा था, इसलिये यह भी सेनी बाज के वादक ही कहे जाते हैं और इस प्रकार से मानने पर मुश्ताक अली खां से सेनी घराना लुप्त हो गया । मुश्ताक अली खां इस बाज के अन्तिम वादक हैं । इनके विषय में कहा जाता है कि यह अपना बाज परम्परागत ही बजाते हैं । इनका वादन मधुर है एवं उसमें सफाई भी है । इनके जौनपुरी आदि रागों को सुनने से ज्ञात होता है कि यह राग के रूप को बहुत ही सुन्दरता से प्रस्तुत करते हैं । इनकी बजायी गयी दरबारी कान्हड़ा की एक रचना उदाहरणस्वरूप नीचे दी गयी है :--

स्थाई -

०	३	×	२	०	
- - - निसनि	रे सस रेनि सरे	घ धनी प पनी	म पप धनी	स स स	
- - - डि ड र	डा डिर डाड राड	डा डाड रा डिर	डा डिर डा रा	डा डा रा	

मुंफना :

३	×	२	०	
- - - सस रेनि सस रे रे	म म मम गग	ग mm प मनीमप	ग म रे स	
	ग ग ग			

अन्तरा :-

- - - मम । ३म पप घ नी । × सं सं सं संसं । २संनिरें रेंसं नीसं सरें

डिर ।डा डिर डा रा । डा डाराडिर। डाऽऽ डिर डाऽ राऽ

मं मं मंमं
घ घनी पं पंगं । गं गगं रें सं । म पप घनी नीसं । सं रेंरें गं मं । मनीपम गम रेस
डा डिर डाडिर।डा डिरडारा।डा डिर डिर डिर ।डा डिर डारा डाराडारा डाऽ राऽ

उपर्युक्त उल्लेखों एवं गतों के उदाहरणों के द्वारा सेनी बाज का अध्ययन किया जाए तो यह अनुभव होता है कि वास्तव में सेनी बाज के वादकों द्वारा मसीतखानी बाज में परिष्कृति की गयी थी तथा सितार वादन में नवीनता का भी प्रयोग किया गया। जैसाकि रहीमसेन एवं अमृतसेन जो कि इस बाज के नायक हैं उनकी प्राप्त गतों से तथा विवरण से यह सिद्ध हो जाता है कि इनके द्वारा सितार के बाज में बहुविध रंगों को भरा गया और उसकी सीमाओं को वृद्धिगत किया गया। परन्तु अफसोस है कि उन्होंने अपनी बाजगत विशिष्ट सामग्री किसी शिष्य को नहीं दी। केवल अपने ही परिवार-जनों को सिखायी जो कि वहीं पर लुप्त हो गयी। इनका सेनी बाज काफी महत्वपूर्ण था परन्तु मसीतखानी बाज का ही परिष्कृत रूप होने के कारण एवं सेनी बाजगत जटिल स्वर संयोजन के कारण यह बाज मसीतखानी के आगे पृथक न रह सका तथा मसीतखानी बाज में ही विलीन हो गया। यही कारण है कि आज कोई यह नहीं कहता कि मैं सेनी बाज बजा रहा हूं, वरन् मसीतखानी बाज ही प्रचलित है।

इस प्रकार अमीर खां के बाद कोई असल सेनिया बाज का वादक न होने के कारण तथा लोगों का घरानों के बंधन तोड़कर स्वेच्छा की इच्छा (जैसाकि फजल हुसैन एवं बरकतउल्ला खां के वादन में स्पष्ट रूप से मिलती है) से बजाने के कारण ही मसीत-खानी एवं रजाखानी बाजों का संगम हुआ और आज तक वादक दोनों बाजों का क्रमबद्ध

रूप से बजाकर ही वादन को सम्पूर्ण करते हैं। यह मानना ही पड़ेगा कि आज तक भी मसीतखानी बाज अपने पूर्ण यौवन पर है और जब तक इससे अधिक शक्तिशाली (विशेषताओं वाला) कोई अन्य बाज का आविष्कार नहीं होगा, यह बाज इसी भांति कीर्तिमान होता रहेगा।

रजाखानी बाज

इस बाज को 'पूरब बाज' अथवा 'पछाव बाज' भी कहा जाता है। इस बाज के आविष्कारक गुलाम रजा थे। उन्होंने अपने नाम के अनुकूल ही इस बाज को रजाखानी बाज कहा।

लखनऊ के तत्कालीन सांस्कृतिक परिवेश में एक अन्य महत्वपूर्ण तत्व उभर रहा था, वह था -- शिया तहज़ीब की नफ़ासत तथा स्थानीय लोक संस्कृति की कोमलकान्त पदावली के सम्मिलित प्रभाव से लखनऊ में ठुमरी-गायकी का विकास। ठुमरी-गायकी की लोकप्रियता को देखकर तंत्र वादकों का भी, उसके जवाब में कुछ रचना करने का विचार आया। इसी के परिणामस्वरूप लखनऊ के निवासी (जो उस समय लखनऊ में बस गए थे) गुलाम रजा ने ठुमरी पर आधारित गतों का निर्माण किया। इस बाज को ही 'रजाखानी बाज', 'पूरब बाज' अथवा 'पछाव बाज' भी कहा जाता है।

रजाखानी बाज में मुख्यत: तीन ताल का प्रयोग किया जाता है। परन्तु इसकी लय पर्याप्त द्रुत होती है। जो ठेका तेज लय की ठुमरियों के साथ बजता था, वही ठेका इन गतों के साथ बजता था। इस बाज में ठोक एवं झाले के लिए कोई स्थान नहीं था। रजाखानी बाज के विषय में सामान्यत: विद्वानों के विचार निम्न प्रकार हैं।

सितार पर रची गयी एक महत्वपूर्ण पुस्तक 'कानून सितार' में सितार के सभी अंगों के साथ 'बाजों' पर भी पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। इसके विद्वान लेखक

ने इसे अली रजाखानी बाज भी कहा है । उनके विवरण के अनुसार[३६] 'इसकी गतें कुछ कठिन होती हैं, क्योंकि उनके बोल (मिज़राब के बोल) आड़े होते हैं और गतों की चाल तेज होती है, इसलिए इसके साथ अद्धे की ताल बजायी जाती है । इन गतों का फैलाव भी कठिन है ।'

आगे पुन: इसका वर्णन करते हुए वे कहते हैं कि 'जिस ज़माने में मैं पूरब और दक्कन में था तो अक्सर दोस्त पूरबी (रजाखानी) सितार बजाते थे, अगर्चित उनसे महीनों सुहबत रही, मगर सिवाय गत और तोड़ों के कुछ और नहीं सुना और ताल से अलग हुए तो खुदा ही हाफिज़ है ।'

इसी प्रकार इस बाज को साधारणत: बेकायदा ही बताया गया है । इसके संबंध में सरयू कालेकर ~~रामबेदी~~ कहती हैं[३७] कि 'इसका आविष्कार अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में अवध के नवाब आसफुद्दौला के आश्रित मुहम्मद रजा ने किया । यह शैली उस युग के उस्तादों को पसंद न थी, वे इसे बेकायदा मानते थे और कहते थे कि इस शैली की गतें तिताले में ठुमरी के अंग पर बंधी हैं । इस शैली का आविष्कार अमीरों के लिए किया गया था ।' रजाखानी बाज के वादन की विशेषताओं पर दृष्टि डालते हुए श्री अरविन्द पारिख कहते हैं[५] कि 'रजाखानी वादन में रजाखान ने गति त्रिताल में बिठाई थी पर लय इसकी द्रुत थी । उसके बोल 'दिर दिर दा दादर दिर दा दिर दा डा दा दाडा' ऐसे थे । इस प्रकार की पद्धति से दायां व बांया दोनों हाथ तेज चलने लगे और बीच-बीच में हाथ का गमक वादन में प्रयोग होने लगा । रजाखानी गत मसीतखानी गत के बाद बजायी जाती थी । इस प्रकार की लय की गतों के वादन के कारण सितार को स्वतंत्र वादन के लिए बहुत लोकप्रिय वाद्यों में स्थान मिला ।'

उपर्युक्त विद्वानों के विचारों पर दृष्टि डालने से यह ज्ञात होता है कि एक ही बाज के विषय में जहां सैयद सफदर हुसैन के कथन से लगता है कि यह बाज कोई

खास नहीं था, वहां कुं० सरयू कालेकर उसे पूर्णतः नापसंद बाज एवं बेकायदा बता रहे हैं। जबकि अरविन्द पारिख रजाखानी बाज को काफी महत्वपूर्ण बता रहे हैं। परन्तु इस विषय में अगर देखा जाय तो ज्यादातर विद्वान संगीतशास्त्री इस बाज की भर्त्सना ही करते प्रतीत होते हैं। आचार्य बृहस्पति इस बाज के सम्बन्ध में विचार व्यक्त करते हुए लिखते हैं [३८] कि, 'रजाखानी बाज शैली के प्रवर्तक गुलाम रजा ही ठीक हैं। यह शैली उस युग के कलाकारों को पसन्द न थी, वे इसे बेकायदा मानते थे और कहते थे कि इस शैली की गतें त्रिताले में ठुमरी के अंग पर बंधी हैं। इस शैली में ठोक और फाले के लिए अवकाश नहीं है। इस शैली का आविष्कार लखनऊ के अमीरों के लिए गुलाम रजा ने किया था।'

इसी प्रकार श्री खुशीराम वेदी रजाखानी बाज के सम्बन्ध में कहते हैं[३९] कि 'रजाखानी आड़े तिरछे बोलों से बजती है।' रजाखानी बाज के सम्बन्ध में यह सामान्य मत है कि गुलामरजा ने जिस रजाखानी बाज को बनाया, उस पर तत्कालीन प्रचलित बंदिश की ठुमरियों का काफी प्रभाव स्पष्ट रूप से पड़ा, इनकी बनायी हुई बहुत सी रजाखानी गतों की बंदिशें ठुमरियों पर आधारित होती थीं जो उस समय की एक विशेष ठुमरी गायन शैली मानी जाती थी। अवध के नवाब वाजिद अली शाह के दरबार में सनद पिया, लल्ल पिया, अख्तर पिया, अब्दुल पिया आदि के उपनामों के अनेक ठुमरी गायक थे। इनकी रचनाएं मध्यकाल में भैरवी, खमाज, काफी, पीलू आदि प्रचलित रागों पर आधारित होती थीं। उदाहरणतः ठुमरी की बंदिशों में राग भैरवी की इस बंदिश 'बाट चलत मोरी गगरी ढुरकायी रे, ऐसो है बेदरदी बनवारी' को ले सकते हैं।

उपर्युक्त ठुमरी की धुन पर रजाखानी गत की शैली अत्यधिक लोकप्रिय हुई। आज भी बड़े-बड़े उस्ताद गायन के साथ ही वाद्य में भी इसी ठुमरी को बजाते हैं।

यथा बिसमिल्ला खां द्वारा जब आज भी यह ठुमरी शहनाई पर बजायी जाती है तो बहुत ही मनोहारी प्रतीत होती है। इसी ठुमरी के आधार पर अनेक गतों का निर्माण कर सितार, वायलिन एवं सारंगी आदि वाद्यों पर रजाखानी बाज बजाया जाता है तथा यह आधुनिक समय में भी अत्यधिक प्रचलित है। इन्हें पुराने उस्तादों से प्राप्त किया जा सकता है। आधुनिक समय में अधिकांश मतों के अनुसार रजाखानी गतों का निर्माण ठुमरियों के आधार पर हुआ जबकि वी०के० राय चौधरी इसके स्थान पर रजाखानी गतों को तराने से आविष्कृत बताते हुए कहते हैं [40] कि 'तराने का अनुकरण कर सितार आदि वाद्यों पर बजने योग्य गत को रजाखानी गत कहा जाता है। कई लोग सोचते हैं कि मसीत खां के शिष्य गुलाम रजा ने इस वादन शैली की सृष्टि की और उसी के अनुसार इसका नाम रजाखानी हुआ। किन्तु कई लोगों के मतानुसार मसीत खां ने स्वयं अपने प्रिय शिष्य के लिए इस वादन शैली की सृष्टि की। मसीतखानी बाजन अपने वंश के लिए रखकर अपने प्रिय शिष्य के संतोष के लिए उनके नामानुसार इस वादन की रचना कर उन्हें शिक्षा प्रदान की। इस बाजन को पूर्बी वाज कहा जाता है। क्यों कि गुलाम रजा के वंशज और शिष्य दिल्ली से पूर्वांन्चल में आकर बस गये थे। रजाखानी बाजन में युक्त बोलों का प्राधान्य दिखाई देता है और यह विलम्बित लय में नहीं होते। आजकल स्वाभाविक रूप से मसीतखानी एवं रजाखानी दोनों ही बाजन एक दूसरे के पूरक हैं। मसीतखानी गत के बाद ही रजाखानी गत बजाने का नियम है जिस प्रकार विलंबित लय में ख्याल गाने के बाद ही द्रुत लय में ख्यालत तराना गाने की पद्धति सर्वमान्य है। रजाखानी में बोलों का विशेष वैशिष्ट्य प्रदर्शित किया जाता है।'

परन्तु इतिहास पर दृष्टि डालने से ज्ञात होता है कि रजा खां का दिल्ली से कोई वास्ता नहीं था। यह पहले राहौल खां में रहते थे जब वहां से इन्हें पिता एवं बहन सहित निकाल दिया गया तो इन्होंने अवध के राजा वाजद अली शाह का आश्रय

प्राप्त किया था। इस तरह इनका दिल्ली में रहना इतिहास सम्मत नहीं है तथा न ही मसीत खां के साथ इनका कोई सम्बन्ध ही था। रजा खां की पारिवारिक स्थितियों से ज्ञात होता है कि यह अवध में ही रहे तथा वहां इन्होंने ठुमरियों के आधार पर रजाखानी बाज बनाया। (आदि विवरण घराने वाले अध्याय में विस्तारपूर्वक किया गया है) सत्य तो यह है कि रजाखानी बाज को अधिकतर संगीतकार बहुत निम्न दृष्टि से देखते थे यथा अभी वर्णित सैयद सफदर हुसैन, आचार्य बृहस्पति, सरयू कालेकर ने भी यही कहा है। इसी प्रकार मोहम्मद करम इमाम भी रजाखानी बाज को निम्नकोटि का ही बताते हुए प्रतीत होते हैं। इनके विचारों का सारांश निम्नलिखित है।[४१]

"मैंने गुलाम रजा के सिवाय और किसी को भी इस शैली में प्रवीण नहीं देखा।" इसके बाद करम इमाम ने लिखा है कि 'उसकी अक्रमिक गतें जो कि तीन ताल में बंधी थीं, वह किसी रागिनी या धुन पर आधारित नहीं थीं, उन्हें ठुमरी के आधार पर रचा गया था। मैंने उन्हें कभी भी पूर्ण या ढंग से बनायी हुई नहीं देखा, लेकिन फिर भी गुलाम रजा के पास इतना दिमाग था कि मैंने उसे काफी रोचक पाया। लेकिन इस बाज के लोगों ने शायद ही इसे सुन्दर बनाया हो। उसमें कोई ठोक व झाला नहीं था। न ही एक दो जगहों के अतिरिक्त राग के लिए कोई क्षेत्र था। उस्ताद लोग इस बाज को नहीं मानते थे तथा बुद्धिजीवी सुनने वाले इसे सुनने में लज्जा का अनुभव करते थे। गुलाम रजा ने केवल लखनऊ के नवाबों के लिए ही इस बाज की रचना की थी। आदि'।

इससे यह सिद्ध हो जाता है कि रजाखानी बाज केवल उस समय की परिस्थितियों के अनुकूल रहीसों एवं नवाबों के लिए बनाया गया था जो कि ठुमरी पर आधारित था। जबकि वी०के० राय चौधरी लिखते हैं कि 'रजाखानी बोलों के साथ तराने का समंजस्य प्रदर्शित होता है।'[४०] इस कारण 'स र ग म' न देकर तराने की वाणी और गत के बोल मात्र दिये गये हैं :--

स्थाई :--

१ । । ।+ । । ।३। । । ०। । ।१। । । ।+१। । । ३।
- ता - ना दी - - - मे ता - ना दी - - -म ता - ना तु - - - मे
- डा ड़ डा डा र डा र डा डा र डा र डा डा- - - र

ता - ना देरे देरे देरे देरे देरे देरे तुम देरे
डार डा डेरे डेरे डेरे डेरे डेरे डेरे डो डेरे

+१ । । ।३। । । ०।१। । । १। । ।
त्र दा - रे ता ना दे - र ना दे - र ना दे - र ना ता
डे डा र डा डा रा डा - र डा डा -र डा डा- र डा र

यह यमन राग में रचित एक प्रसिद्ध तराने की वाणी एवं प्रसिद्ध गत के बोल हैं।

उपर्युक्त उल्लेख में वी०के० राय चौधरी रजाखानी बाज की उत्पत्ति तराने से मान रहे हैं। जबकि सभी पुराने उल्लेखों से यह सिद्ध हो चुका है कि रजाखानी बाज का आविष्कार ठुमरी के आधार पर हुआ। इस सम्बन्ध में यह संभव है कि वर्तमान समय में अथवा गुलाम रजा खां के बाद इस बाज पर तराने का प्रभाव पड़ा हो, परन्तु रजाखानी बाज के आविष्कार का मूल प्रेरणास्रोत ठुमरी ही थी।

रजाखानी बाज के विषय में सादिक अली खां ने पूर्वी गत बतलायी है। उन्होंने लिखा है[२२] -- 'मिसाल पूर्वी गत की बोलों की।

डाड़ डड़ डड़ ड़ा ड़ा डाडाड़ डा डा ड़ अ डा ड डाड़ आड़ाड अडडा डा डा डा डाड़डडा इत्यादि।'

इस प्रकार के पूर्वी बाज में अत्यन्त कठिन बोलों का प्रयोग किया जाता था। मसीतखानी बाज में मिज़राब की तैयारी प्रधान थी जबकि इस समय में उल्टे हाथ का काम काफी किया गया। आदि इन उल्लेखों से प्राप्त निष्कर्षों के आधार पर

कहा जा सकता है कि रजाखानी बाज द्रुत गति का बाज था । इस पर प्रयोग किए जाने वाली गत के बोल निम्न प्रकार के होते थे --

"दिर दिर दा दिर दारा दिर दारा दा-रदा-रदा-"

इस पद्धति के परिणामस्वरूप दायां व बायां दोनों हाथ तेज गति से चलने लगे । बांया हाथ कभी-कभी 'मधी' गमक भी लेने लगा । गुलाम रजा का काल जो कि ठुमरी पर आधारित था, उसमें निम्न प्रकार गतों को बजाया जाता था :--

राग तिलक कामोद, द्रुत गत, तीन ताल

× २ ० ३
प नीनी सरे । - गसरे । रे पप धध मम । ग - गस-सनि-
दा दिर दा रा। ड दा दा रा । दा दिर दिर दिर । दाऽरदा ऽर दा-
स रेरे मप । सो पधम । स रेरे गग मप । ग - गस - स नि-
दा दिर दा दा दा रा दा रा । दा दिर दिर दिर । दाऽ रदा ऽर दा

ये गतें द्रुत लय में बंधी होती थीं तथा बीन अंग का ठोक, कालाा, लड़गुधाव, रबाब और सुरसिंगार का काम आदि,इन गतों में नहीं हो सकता था । अत: पुराने गुणी लोग इस बाज को हेय दृष्टि से देखते थे । परन्तु आधुनिक काल में रजाखानी बाज एक उन्नत एवं श्रेष्ठ बाज माना जाता है । हर सितार वादन के कार्यक्रम में मसीतखानी बाज के बाद रजाखानी बाज बजाना अनिवार्य सा हो गया है । रजाखानी गत बिना बजाए वादन में अधूरापन महसूस होता है । यही कारण है कि रजाखानी बाज में भी अब काफी परिवर्तन करके इसके दायरे काफी विस्तृत कर दिये हैं । मीड़, कृंतन एवं मुर्की आदि सौन्दर्यात्मक पहलुओं का बहुत ही सुन्दर प्रयोग रजाखानी में मिलता है ।

गुलाम रजा के पश्चात इस बाज के दो भाग हो गये । एक भाग में वादकों ने कलकत्ता एवं उसके आसपास रहकर इस बाज को आगे बढ़ाया तथा दूसरे रजाखानी बाज

के वादकों नें इसे लखनऊ एवं इसके आसपास के क्षेत्रों में विकसित किया । कलकत्ता एवं उसके आसपास सितार बजाने वालों में गुलाम मोहम्मद का स्थान सराहनीय है । यह एक प्रसिद्ध बीनकार के शिष्य थे । इन्हीं के द्वारा सितार वादन को सुविस्तृत आलाप एवं ध्रुपद का संगीत दिया गया । यह अपने वादन में ध्रुपद को भी बड़ी सुन्दरता से उतारते थे । सुरबहार के वादन का इतिहास भी इन्हीं के द्वारा प्रारम्भ किया गया था । ये वीणा के ढंग पर आलाप, जोड़, झाले का वादन किया करते थे जिससे सितार के बाज को एक नई दिशा मिली । इनके द्वारा बजाए गए बाज का ही अनुकरण सज्जाद मोहम्मद ने किया । इन्होंने सितार पर पूरब बाज की गतें बजायीं तथा पूरा ध्रुपद आलाप सुरबहार पर बजाया । कृंतन के काम में यह माहिर थे । सज्जाद मोहम्मद ने सितार वादन शैली को बहुत उन्नति दी । इनकी बजायी गतों में से कुछ निम्न हैं--

सज्जाद मोहम्मद, राग बिहाग, तीन ताल

०					३				×				२			
स	मम	ग	प	|	-	नी	-ध	सं	|	नी	-	-	धप	|	प	-	-मे	प	ग
डा	डिर	डा	डा	|	र	डा	डर	डा	|	डा	ड	र	डिर	|	डाड	डर	डा	रा	
ग	मम	पप	धध	|	ग	-मग	-रे	स	|	नीप़	-	नी़	-।	|	-नी़	स	नि़	स	
डा	डिर	डिर	डिर	|	डाड	रडा	डर	डा	|	डा	डा	र	डाड	|	डर	डा	डा	रा	
ग	मम	पप	मम	|	ग-	गम	-म	ग	|	स	ग	-रे	मम	|	ग	रेरे	स	नि़	
डा	डिर	डिर	डिर	|	डाड	रडा	डर	डा	|	डा	डा	डर	डिर	|	डा	डिर	डा	रा	

सज्जाद मोहम्मद, राग देस , तीनताल

०	३	×	२	
- - - सस	रे- रे,म -म पप	नी सं रे सरे नी- नीनी	ध -ध प -प मग	
डिर	डाउ र,डा उर डिर	डाउउ उउउ उ डिर	डाउ रडा उर डिर	
०	३	×	२ म १ प	
रेम गरे - मम	ग- ग,रे -स रेरे	नी- -स नी स	रे म फ़ी घप	
डाउ डाउ उ डिर	डाउ र,डा उर डिर	डाउ उर डा रा	डा रा डाउ राउ	
०				
म- म,ग -रे				
डाउ र,डा उर				

इस प्रकार सज्जाद मोहम्मद की उपर्युक्त गतों को देखने से ज्ञात होता है कि ये बहुत व्यवस्थित थीं तथा साधारणत: तीनताल में ही बजायी जाती थीं । बोलों में विविधता एवं चंचलता मिलती है । इन्हीं की शिष्य-परम्परा में इमदाद खां ने पूर्वी बाज को अपनाया ।

इमदाद खां ने उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में सितार पर ऐसी छाप छोड़ी कि आज तक उनकी शैली को विशिष्टत: 'इमदादखानी बाज' कहा जाता है । इमदाद खां के साथ नया शैली गत विकास हुआ । इन्होंने दे, दा, दे के बोलों का प्रचार किया, जिनका आविष्कार इमदाद खां ने किया था । इस बाज में इन्होंने आगे चलकर दोहरे फाले का विकास किया । इन्होंने आलाप के बारह अंगों का वादन शैली में व्यवहार कर मसीतखानी बाज का आंशिक रूपान्तरण किया और उसमें उन्नति की । मसीतखानी बाजन मुख्यत: प्राचीनकाल की ध्रुपद शैली है । इमदाद खां ने ख्याल शैली ~~के साथ ध्रुपद शैली~~ का अद्भुत सम्मिश्रण किया एवं सितार पर फाले की प्रधानता का उन्होंने प्रचलन किया । इमदाद खां के द्वारा सितार की वादन शैली में सम्यक परिवर्तन के कारण विद्वान इसे 'इमदादखानी बाज' अथवा 'आधुनिक मसीतखानी बाज' के नाम से संबोधित

करने के पक्ष में हैं।

एक लेख में इमदाद खां के वादन के विषय में बताते हुए लिखा गया है[४२] कि, 'इस बाज में इमदाद ने जोड़ अंग का विकास किया जोकि आजकल कई सितारिए बजाते हैं। राग के कई स्वरूप बोलाकार जोड़ अंग में ही बजाते हैं तथा कई बोल जैसे -- रा-दा-दा-दा और दा रा दा दा रा दा दा रा और दार - दा दार - दा तथा अन्य कई दाहिने हाथ के बोलों को इन्होंने ही प्रचलित किया।' इसी के साथ लेखक काले का आविष्कारक भी मानते हैं, परन्तु जैसाकि पहले बताया जा चुका है कि काले का वादन गुलाम मोहम्मद के समय से ही सितार पर किया जा रहा था।

इमदाद खां के वादन पर प्रकाश डालने हेतु उनके द्वारा बजाई भैरवी की मसीतखानी गत दी जा रही है।

इमदाद खां, मसीतखानी गत, राग भैरवी[४३]

स्थाई :--

× २ ० ३
प प प गुग् | स गुम गुम पधु पम | ग रेग् सरे स पधु | प मप ग म
डा डा रा डिर | डा डिर डाऽऽऽ राड | डाऽऽ डाऽ रा डिर | डा डिर डा रा

मंफा :--

० ३ × २
- - - गुग् | रे सस नि स | ध नीनी सरेग् ग | स गुम गुमपधु पम |
डिर | डा डिर डाऽऽरा | डा डिर डाऽऽरा | डा डिर डाऽऽऽ रा |

० ० ०
गरेग् सरेस पधु
डाऽऽ डाडरा डिर

अन्तरा

म
- - - पप | ग़ मम घ़ नी़ | सं सं सं गंगं | रें संसं नी़ सं | घ़ नीनी़ घ़ प
डिर | डा डिर डा रा | डा डा रा डिर | डा डिर डा रा | डा डिर डा रा

| स ग़प ग़मपघ़ पम | ग़रेग़ सरे स-
| डा डिर डाsss रा s | डाss डा s रा s

इमदाद खाँ, राग देस, तीन ताल, रजाखानी गत ४४

स्थायी

० ३ × २
स रेंरें रे म | - प म प | नी-नी सं नी | सं रेंरें नी़ नी़
डा डिर डा रा | - डा डा रा | डा डर डा डा | डा डिर डा रा

घ प घघ पप | म- मग - गरे | रे नीनी़ घ नी़ | घ नी़ पध
डा रा डिर डिर | डाs रडा डर डा | डा डिर डा रा | डा रा डारा

म प घघ पप | म- मग -ग रे | रे पप प म | ग रे ग ग
डा रा डिर डिर | डाs रडा डर डा | डा डिर डा रा | डा रा डा रा

अन्तरा

× २ ० ३
म म प प | पनी़ प नी नी | सं सं नीनी संसं | रें-रेंनी -नी सं
डा रा डा रा | डा रा डा रा | डा रा डिर डिर | डाsरडा डर डा

सं गंगं रें मं | - गं रें सं | नी सं रेंरें संसं | नी़ -नी़प -घ प
डा डिर डा डा | र डा डा रा | डा रा डिर डिर | डाs रडा डर डा

प रेंरें सं रें | -रें सं रेंरें | सं रें -रें | रें- रें-
डा डिर डा डा | र डा डा डिर | डा डा रडा | डार डार

रे पप प म | ग रे ग ग
डा डिर डा रा | डा रा डा रा

इमदाद खां की बजाई उपर्युक्त गतों को देखने से यह सिद्ध हो जाता है कि इनके द्वारा रजाखानी बाज में तो कुछ परिवर्तन किए गए, साथ ही मसीतखानी गतों को भी अपनाया गया । इन्होंने वादन शैली को पूर्णता प्रदान करने में पर्याप्त सहयोग दिया । इनके पश्चात इनके पुत्र इनायत खां द्वारा मसीतखानी एवं रजाखानी गतों को सम्मिलित रूप से बजाने की प्रथा को मजबूत एवं विकसित किया गया ।

इनायत खां ने आलाप पर ध्यान दिया जो गत के पूर्व बजाया जाता है । इसके साथ ही इन्होंने विलम्बित एवं द्रुत गतों के साथ बजने वाली कई तानों का वादन करना प्रारम्भ किया । उनकी शैली बंदिश पर आधारित थी जिसमें स्वर एवं बोलों की निश्चित व्यवस्था होती थी । बंदिश शैली से शिष्यों को सिखाना सरल हो गया और सितार विशेषत: बंगाल में अधिक जनप्रिय हो गया । इसी प्रकार के विचार ब्रजभूषण लाल काबरा के भी हैं ।[४५] इनके पिता ने भी इनायत खां से सितार वादन की शिक्षा प्राप्त की थी । काबरा जी के अनुसार 'बंगाल में आज जो सितार का एक स्थान है, तथा वह इतना लोकप्रिय हुआ है, इसका श्रेय इनायत खां को ही है ।'

इनायत खां ने बंदिशों को इतना पूर्ण बना दिया कि पुनरावृत्तियों के बावजूद भी राग का प्रस्तुतीकरण रोचक रहता था एवं उसकी शुद्धता एवं मधुरता बनी रहती थी । सितार पर कठिन तिहाइयों के वादन का आविष्कार करने का श्रेय भी इनायत खां को ही है । इससे पहले कठिन तिहाइयां तबले एवं पखावज पर ही बजायी जाती थीं । परन्तु इनायत खां ने बहुत ही सुन्दर एवं मुश्किल तिहाइयों को सितार वादन में स्थान दिया ।[४२] इनायत खां द्वारा बजाया गया जोगिया राग बहुत ही मधुर है । इस राग में इन्होंने पहले थोड़ा आलाप किया है फिर द्रुत गत का वादन किया है जो निम्न है--

राग जोगिया, द्रुत गत, तीन ताल[४६]

-स | २ रे म - प | × ध - प - | ० - मम पप धध | ० म - ... मरे
s दा | रा दा ऽ रा | दा s रा s | s दिर दिर दिर | दाऽ रदा

राग बिहाग, विलम्बित गत, तीन ताल[४७]

स्थायी

० ३ × २
- - - सनि | स गमरेग प नी | धनीसं नीध प पम | गम गम गपमं प |
डिर | डा डिऽरऽ डा रा | डाऽऽ डाऽ रा डिर | डाऽ डिर डाऽऽरा |

० गम गरे स |
डाऽ डाऽ रा |

मंझा

० ३ × २
- - - गपमंप | गम गरे नीरेसनिस नि | मप नीनी सस | ग मग गप मंप
डिऽरऽ | डाऽ डिर डाऽऽऽ रा | डाऽ डिर डारा | डा डिर डाऽ राऽ

० गम ग- रेस
डाऽ डाऽ राऽ

अन्तरा

- - - पमं | गम गम पनी | सं सं सं संनीरेंसं | नी पमं प नी |
डिर | डाऽ डिर डारा | डा डा रा डिऽरा | डा डिर डा रा |

सं गंरें मंगं स | पमं गम रेग गपमंप | गम गरे स-
डा डिर डाऽ रा | डाऽ डिर डाऽ राऽऽऽ | डाऽ डाऽ राऽ

उपर्युक्त मसीतखानी गत के समान ही एक अन्य गत भी इनायत खाँ द्वारा बजायी हुई है। इसका ढांचा पुरानी गतों से अलग है। इसके बोल इस प्रकार हैं--

डा डिर डा रा । डा डिर डा रा । डा डा रा डिर । डा डिर डा रा
२ ० ३

राग तिलक कामोद, द्रुतगत, तीन ताल ४८

स्थायी

× २ ० ३
नि निनि नि सं । पध मम ग स । (नि) पनी स रेप । मग सरेग नी स
डा डिर डा रा। डाऽडिर डा रा। डा डिर डा डिर। डाऽ डिऽर डा रा

मंझा

× २ ० ३
रेग सरे म प। पसं पध मग (स) । नी पनी स रेप । मग सरेग नी स
डाऽ डिर डा रा डाऽ डिर डाऽ रा । डा डिर डा डिर। डाऽ डिऽर डा रा

अन्तरा

× २ ० ३
रे रेरे म प । नी नी सं संसं । संरेंगं रेंमं मंगं गं । संरेंगं नी सं नी
डा डिर डा रा। डा डा रा डिर । डाऽऽ डिर डा रा। डाऽऽ डा रा डा

सेनी सं (सं) पधे । मम प सं पध । (म) मग (नी) रेप । मग सरेग नी स
डिर डा रा डाऽ डिर डा रा डाऽ। डा डाऽ रा डिर । डा डिऽर डा रा

राग खमाज, द्रुत गत, तीन ताल ४९

० ३ × २
स्थायी :- स मम ग म । - प म प । नीसं रें सं नी । ध प म ग
डा डिर डा डा। रा डा डा रा डाऽ डा डा रा। डा रा डा रा
१

प नी घध पप । म- म,ग -रे ग। सस नीनी स- स,ग। -रे ग मम गग
डा रा डिर डिर।डाऽ र,डा ऽर डा।डिर डिर डाऽ र,डा।ऽर डा डिर डिर

म- म,प-प ग। म प प स। - प - म। ग रे स नि
डाऽ र,डा ऽरडा। डा डा राडा। रा डा राडा। डा रा डा रा

राग देस, द्रुत गत, तीन ताल[५०]

अन्तरा

० ३ × २
म मम प पनी ।-नी प नी नी । सं सं नीनी संसं । रें- रेंनी -नीध
डा डिर डा राऽ । ऽर डा डा रा ।डा रा डिर डिर ।डाऽ रडा ऽर डा

म नीनी ध प। -ध म ग म । ग रे रेम गम ।ग- ग,रे -रे स
डा डिर डा डा ।डर डा डा रा ।डा रा डिर डिर ।डा र,डा डर डा

रेंगं मं गं रें। रेंग म ग रे । म- म ग -रे-
डाऽडा डा रा।डाऽ डा डा रा । डाऽराडा -र ऽ

इनायत खां की उपर्युक्त गतों को सुनने से यह पूर्ण विश्वास हो जाता है कि इनका सितार वादन पर पूर्ण अधिकार था। इनायत खां द्वारा बजाये गये राग जोगिया में छोटे-छोटे तोड़ों को लगाकर सुन्दर तिहाइयों को बजाया गया।[४६] इसी प्रकार खमाज में भी लय का काम काफी अच्छा दिखाया है।[४६] खमाज में गत झाला बजाकर समाप्त की है। इनके झाले में भी बहुत सफाई है। झाले के बोलों में एक भार है जो कि आधुनिक समय में विरले ही मिलता है। इनका सुर बहार पर बजाया हुआ पूर्वी राग का आलाप भी मिलता है। यह भी पूर्णत: ख्याल पर आधारित है।[५१] इनके वादन में ही सर्वप्रथम ख्याल अंग की तानों का प्रयोग मिलता है। जैसाकि इनके विषय में कहा गया है, 'उस्ताद इनायत ने सर्वप्रथम ख्याल गायकी अंग की तानों को वाद्य संगीत में बजाया क्योंकि उनकी रिकार्ड से यह साफ दिखता है कि

वह पहले वादक थे जिन्होंने इकहरी तान को रिकार्ड किया जो गायकी अंग पर आधारित है।[४७] यथा नि स रे ग म ग रे स। म प ध नी सं नी ध प। नी स रे ग म ग रे स। नी ध प म गरे सनि -- यह तान सर्वप्रथम सितार पर इनायत खां ने बजाई तथा रिकार्ड की। उ० इनायत खां इसी तान की वजह से काफी प्रसिद्ध हो गए क्योंकि उनसे पहले वाद्य संगीत में तानें नहीं बजती थीं। (सारंगी के अतिरिक्त, जिस पर गायकी के अलावा कुछ नहीं बजता) वाद्य संगीत के ढंग में सितार पर सीधे हाथ से काफी बोल बजाए जाते थे परन्तु उल्टे हाथ से इकहरी तान कोई नहीं बजाई जाती थी।

इन्होंने सितार पर आलाप ख्याल अंग से बजाया है। बढ़त ख्याल अंग से सितार पर बजाने का अर्थ है कि पहले वाद्यों पर आलाप कभी भी क्रमिक रूप से नहीं बजाया जाता था जिस तरह से गायक लोग गाते हैं। इस बाज के वादकों द्वारा पहली बार आलाप में बढ़त को बताया तथा जोड़ अंग में क्रमिक क्रियाओं को विकसित किया। इस प्रकार इमदाद खानी में वादन में पहले क्रमिक आलाप बजाया जाता है फिर जोड़ अंग बजाया जाता है। इसमें रा दा दा दा तथा कई सीधे हाथ के बोलों के समूह जो कि आजकल प्रचलित हैं, बजाए जाते है। फिर मसीतखानी एवं रजाखानी गतें बजती हैं। इसके बाद कई ख्याल अंग की रचनाएं जिन्हें बंदिश कहते हैं, बजायी जाती हैं। अन्त में वादन को झाले द्वारा चरम सीमा पर पहुंचा दिया जाता है तथा अधिकतम लय पर तिहाई द्वारा इसे समाप्त किया जाता है।[४२] इनायत के भाई वहीद खां का सितार वादन सुनने से यह बात कहीं तक सिद्ध हो जाती है। वहीद खां द्वारा बजाया गया एक तीन मिनट का रिकार्ड उपलब्ध है जिसमें एक तरफ राग पीलू में द्रुत गत बजायी है।[५२] इसमें पहले आलाप फिर द्रुत गत फिर झाला बजाया है तथा दूसरी तरफ राग खमाज बजाया है।[५२] तरब छेड़कर आलाप शुरु किया है फिर विलम्बित गत उसमें बढ़त, फिर तिये युक्त तानों का प्रयोग किया

गया है यथा कुछ निम्नलिखित हैं --

१. गम धनी सं- गम धनी सां- गम धनी सं

२. यह तोड़ा गमक से बजाया है रेग गग रेम मग

इस प्रकार की गमक से तोड़ा बजाकर रेग गग रेम मम रेग गग रेम मग रेग गग रेम मम की तिहाईं लगाकर वादन समाप्त कर दिया है ।

इनायत खां के पश्चात उनके पुत्र विलायत खां एवं इमरत खां ने भी सितार पर बहुत सिद्धि पायी है । विलायत खां ने सितार में सब प्रकार की कूट, गमक, तान, ज़मज़मा, फिरत व बढ़त ख्याल गायकी के आधार पर बजाने में समर्थता प्राप्त की । जो इस घराने की उपज है । विलायत खां का बाज पूर्णत: ख्याल गायकी पर ही आधारित है । यह ज्यादातर ख्यालों को ही अपने वादन में उतारते हैं । विलायत खां के आज अनेक रागों के रिकार्ड उपलब्ध हैं जिससे कि इनकी गतों पर विचार किया जा सकता है । इनकी बजाई राग यमन की विलम्बित गत निम्न है[५३] --

तीन ताल, स्थायी

गग । ३रे सस नि,धध नि़रे । ×मग ग रेरे । २ग मम घ म । ०ग रे स
दिर। दा दारा दा,दिर दा़। दादा रा दिर। दा दिर दा रा। दा दा रा

द्रुत गत, तीन ताल

स्थायी सनि । ०सं गग रे ग । ३मं - घ । ×नी घ प मं । २गं रे
दारा। दा द्रि दा रा । s दा s रा। दा रा दा रा । दा रा

इनकी गतों को सुनने से वास्तव में इनके वादन की गहराई एवं कठिन बोलों का प्रयोग स्पष्ट हो जाता है। इनके द्वारा बजाई शंकरा की गत भी पूर्णतः ख्याल पर ही आधारित है जो निम्न है --

स्थायी :-- नी नीधनी सनी रेस । नी धनी (प) ग । प नी ध स
ऐ सो ढी ट । लं ग र क । रे ब रा जो

नी - (प) - । ग प रेग - । स
री ओ । र ठि ठो । री

उपर्युक्त इमदाद खानी बाज के उल्लेख से यह स्पष्ट हो जाता है कि इन वादकों ने सितार वादन में महत्वपूर्ण योगदान दिया तथा इसमें आवश्यक तत्वों का समावेश ही नहीं किया, वरन् सितार को अधिक से अधिक विकसित एवं विख्यात किया है। इनके वादन में विशेषतः विलायत खां के वादन में ख्याल का रूप बहुत ही सुंदरता से निखारा जाता है जबकि इनायत खां, वहीद खां के वादन में कठिन से कठिन मिज़राब के बोलों का प्रयोग किया गया है। इनके रिकार्ड सुनने पर ज्ञात होता है कि सितार की गत बजाते समय यह बोलों की लड़ी सी बांध देते हैं। इनके बाज का सौन्दर्य इतना है जो कि लेखन की सीमा के परे है। परन्तु जहां तक बाज के नाम का सवाल है, यह पृथक बाज के रूप में प्रख्यात नहीं है। बाज आज केवल दो ही प्रमुख हैं -- (१) मसीतखानी एवं (२) रजाखानी।

रजाखानी बाज जहां एक ओर इमदादखानी बाज जो गुलाम मोहम्मद और सज्जाद मोहम्मद से जुड़ा हुआ है, तथा बंगाल में विकसित हुआ, वहीं दूसरी तरह नवाब हशमत जंग बहादुर से जुड़कर लखनऊ में विकसित हुआ। लखनऊ में ठुमरी का साम्राज्य था। अतएव यहां के वादन पर ठुमरी का प्रभाव काफी मात्रा में एवं काफी समय तक स्पष्ट देखने को मिलता है। नवाब हशमत जंग ने पूरब बाज में जिसे कि रजाखानी बाज कहते हैं, गतें तीन ताल में ठुमरियों पर बांधी। ~~जैसे कि रजाखानी बाज कहते~~

~~हैं, यहाँ तीन ताल में ठुमरियों पर बनी~~ । इनकी गतें खूबसूरत होने के साथ ही साथ बहुत सुन्दर हैं । इन्होंने अपनी बनायी हुई गतों को एक नई शक्ल दी । राग गारा की ठुमरी पर बंधी हशमत खां जंग की एक गत का रूप इस प्रकार है[५४] --

राग गारा, तीन ताल

स्थायी

०		३		×		२	
-ध़ -ध़ नि़ नि़	सं रेंरें ग म	गं - रें गं	सां रें नि़ स
sदा sर दि र	दा दिर दा रा	दा s दा रा	दा रा दा रा
नि़ सस निनि़ रेंरें	नि़ नि़प (पम) प़	ध़ धध़ -ध़ निनि़	ध़ पप़ म प़
दा दिर दिर दिर	दा रदा दारादा	दा (दिरsदा) दिर	दा दिर दा रा
- -ध़ -नी प़	ध़ नी स -	- -ध़ -ध़ नि़	सा रें ग -
s sदा sर दा	दा रा दा s	s sदा sर दा	दा रा दा s

पूर्वी बाज में अधिकतर द्रुत गतों का ही वादन किया गया । इसी प्रकार वाजिद अली शाह के वज़ीर नवाब अली नकी खां भी सितार बहुत अच्छा बजाते थे । उन्होंने सितार पर अनेक द्रुत गतों की बंदिशें कीं । उदाहरणार्थ उनकी एक झिंझोंटी राग की गत प्रस्तुत की जा रही है[५४] --

झिंझोटी (ठुमरी अंग), तीनताल

०		३		×		२	
ग पप गग मम	गं- गग -ग (सा)	रेंग म ग रे	सां नि़ सा नि़
दा दिर दिर दिर	दा रदा डर दा	दिर दा दा रा	दा रा दा रा
रे नि़ सा प़	ध़ सा रे ग	घ निनि़ घ (घ)	निनि़ ध घ ग ग
दा रा दा रा	दा रा दा रा	दा दिर दा दा	sरदा दा रा

उपर्युक्त गतों पर विचार करने से यही प्रतीत होता है कि ये गतें भी वैसी ही हैं, जैसी आजकल रजाखानी गतें बजायी जाती हैं। इन वादकों के द्वारा राग के रूप को ध्यान में रखते हुए गतें बनायी गयीं थीं। इन गतों की प्रकृति चंचल है।

रजाखानी बाज के बजाने वालों में लखनऊ के कुतुबुद्दौला, जो प्यार खां के शिष्य थे, सिद्धहस्त थे। उनकी एक गत व कुछ तोड़े इस प्रकार हैं [५४] --

झिंझोटी (खमाज ठाठ), तीन ताल

												३			
												ध़	ध़ नी़	ध़ धनी़	धपध़
												दिर	दिर दा	दिर दादिर	
×				२				०				३			
नि़स	नि़ सा	सा।	सा	सानि़	निसा	सारे ।	सारे	नि़	नि़धप	प़।	पध़	नि़स	नि़	ध़	
दिर	दा रा	दा।	दा	दिर	दिर	दिर ।	दिर	दादारा	दा	दा।	दारा	दिर	दा	रा	
धप़	म़	ध़	ध़।	ध़	प़	ध़	म़।	प़	ध़	म़					
दिर	दा	दा	रा।	दा	रा	दा	रा।	दा	दा	रा					

तोड़ा :--

१		×				२				०					
ध़	।	धनि़	ध़	धनि़	धपध़	।	निसा	नि	सासा	।	नि़	स	गम	गम	
दिर	।	दा	दिर	दा	रा	।	दा	दा	रा	दिर	।	दा	दिर	दा	दिर
०				३				×			२				
गम	गम	सासा	नि़।	सारे	नि़	ध़	धप़	।	प़	ध़	ध़	प़	।	पध़	नि़ सा,
दा	दा	रा	दिर।	दिर	दा	दिर	दा	।	दा	दिर	दा	रा।		दा	दिर दा,

कुतुबुद्दौला की एक अन्य गत सन् १८७६ की 'नग़म-ए-सितार' नामक पुस्तक में मिलती है। लेखक रहीम बेग साहब हैं। उन्हीं के शब्दों में -- 'यह गत मियां कुतुबुद्दौला बहादुर की है, निहायत उम्दा है। नियाजमंद ने ताज खां के बेटे नासिर खां से याद करी है। इस गत के ऊपर मश्क करने से बहुत हाथ तैयार होता है। यह गत बहुत मुश्किल नहीं है और अगर आप इस गत को तैयारी में बजाओ, तो निहायत लज्जत पकड़ती है।'

गत खमाज (पूर्वी बाज की), शबै ठाठ खमाज

सां नि घ प | म ग सा सा
दारादा दारादा · दारादा दारदा | दा दारादा दा दारा

म प घ नि | सां नि घ प
दार दार दा दिर | दिरदिर दार दार दा

और यह तोड़ा गत से बेहतर है, मगर मुश्किल है --

नि सा नि सा ग म प घ नी सां नि घ प
दा दिर दा रा दार दा रा दिर दिर दिर दार दार दार

उपर्युक्त गतों के अतिरिक्त कुतुबुद्दौला की राग काफी की एक गत निम्नलिखित है [५४]—

× 2 ० 3
नि सस नि रे | -रेग स रे | रे गु मम पप | गु- रेरे -स रे
डा डिर डा डा | र डाऽडा रा | डा डिर डिर डिर | डाऽर,डा डर डा

प -प म | प घ (नी) - | घ प मम पप | गु- गुरे -स रे
डा र डारा | डा रा डा ऽ | डा रा डिर डिर | डाऽ रडा डर डा

रे नीनी घ नी | घ नी प घ | नी रेंरें नीनी संसं | नी- नीघ -घप
डा डिर डा रा | डा रा डा रा | डा डिर डिर डिर | डाऽ रडा डर डा

म गुगु म प | -प सं नी घ | म गुगु मम (प) | गु- गुरे - सरे
डा डिर डा रा | डर डा डा रा | डा डिर डिर डिर | डाऽ रडा डर डा

इस प्रकार की ~~गतें~~ कभी गतों में अन्तरा स्थाई से अलग नहीं होता वरन् दोनों मिले हुए होते हैं। कुछ वादक इन्हें गुमशुदा अथवा मंझदार गतें भी कहते हैं। कुतुबुद्दौला ऐसे पहले वादक थे, जिन्होंने इस प्रकार की गतों का निर्माण किया।

पूर्वी बाज के उस्ताद आजम खां (इनका विस्तृत परिचय घराने में देखिए) ने अपने पुत्रों को भी सितार की शिक्षा दी। इनके बड़े पुत्र उ०अब्दुल गनी खां मसीतखानी और द्रुत वादन में सिद्धहस्त थे तथा अपने पिता आजम खां का ही बाज बजाते थे। (ध्यान रहे, आजम खां के विषय में कहीं ऐसा उल्लेख नहीं मिलता कि यह मसीतखानी भी बजाते थे) आपका आलाप वादन शुद्ध ध्रुपद शैली के आधार पर ही होता था। ध्रुपद की चारों तुकों -- स्थायी, अंतरा, संचारी और आभोग -- में आपका आलाप निबद्ध था। मसीतखानी गतों के अतिरिक्त आपकी द्रुत गतें भी बहुत सुन्दर और विचित्र थीं। उन गतों की बंदिश एक आवृत्ति में हीन होकर तीन या चार आवृत्तियों में समाप्त होती थीं। उन बंदिशों की विचित्रता देखते ही बनती है। वे अपने वादन में तंत्रबाज (जैसे -- 'दिरदिर') और विभिन्न प्रकार की मिज़राबों का प्रयोग तथा लयकारी का सुन्दर रूप प्रस्तुत करते थे। उदाहरणार्थ राग गौड़ मल्हार में उनकी एक गत निम्नलिखित है[५४] --

द्रुत गत तीन ताल

०	३	×	२
सासा -प -म प | घ म -म प| सां - - सां| घ प म ग			
दिर डदा डर दा |दा दा डर दा| दा ऽ ऽ रा| द्रा रा दा रा			
रे मम ग प | म घ प प | ग प ग मम | रे- रेसा -सा सा			
दा दिर दा रा| दा रा दा रा|दा दिर दिर दिर| दाड रदा डर दा			
म पप मग मम | ग- गरे -रे सा			
द दिर दिर दिर|दाड रदा डर दा			

उस्ताद अब्दुल गनी खां के शिष्य उस्ताद यूसुफ अली खां थे। इनकी शैली में सर्वाधिक ध्यान देने की बात है परम्परागत तंत्र वाद्य का प्राधान्य है। इनकी शैली वाणी के अनुसरण रूप द्वितीय कोटि की वादन शैली से भिन्न रहती थी। आजकल के कुछ प्रमुख सितार वादक इस प्रकार के अनुकरण का लोभ संवरण नहीं कर पाते। वे उन छोत्रों

के अन्वेषण का प्रयत्न करते हैं, जो परम्परागत तंत्रवाद्य में निषिद्ध हैं। उस्ताद यूसुफ अली का सितार परम्परागत शैली का श्रेष्ठतम उदाहरण है। इनके बाज में पुरानी तंत्रकारी का रूप था। वे ध्रुपद के समान ही राग का शुद्ध आलाप करते थे। आलाप के स्थाई, अन्तरा, संचारी और आभोग में मीड़ और गमकयुक्त स्वरों का शुद्ध प्रयोग करते थे। आलाप के साथ-साथ ~~मसीतखानी और~~ पूरब बाज का वादन करते थे। आजकल सितारवादन में गले की तानों (यथा 'गगरेस निनि धप, गगरेस' आदि) के विभिन्न प्रयोग बहुत किए जाते हैं। इससे भिन्न उस्ताद यूसुफ खाँ के वादन में तंत्रकारी के अंग 'दिर दिर' का प्रयोग भरपूर होता था। दिल्ली स्टूडियो से प्राप्त एक रिकार्ड में, राग बागेश्री में निबद्ध उनकी एक रचना की शैली का विश्लेषण इस प्रकार है -- 'इस राग में इन्होंने प्रथम ध्रुपद अंग का आलाप किया, जिसके स्वरों में मीड़ एवं गमक का प्रयोग करते रहे। बहुत ही मधुर और साफ सुथरा आलाप राग की पूर्णतया प्रदर्शित करता है। आलाप में स्थायी, अन्तरा, संचारी और आभोग को प्रस्तुत किया गया है फिर बागेश्री की द्रुत गत इस प्रकार बजाई गई है[५४]--

०		३		× सां		२	नि
स संसं संसं संसं	नि - निध -प ध		नि - - - सां		- - -नि	ध म	
दा दिर दिर दिर	दाऽ	रदा ऽर दा	दाऽ	s s दा	ऽऽ	ऽर	दा रा
ग गग मम मम	ग- गरे -रे सा		धनी नी सा म		-ग म ध		
दा दिर दिर दिर	दाऽ	रदा ऽर दा	दा दिर दा रा		sदा दा रा		
नि संसं घध नीनी	घ- धा -ग म		नी -नी ध (ग)		-ग रे स स		
दा दिर दिर दिर	दाऽ	रदा ऽर दा	दा ऽर दा रा		ऽदा दा दा रा		

इस गत को बजाने के बाद इसमें पहले फिरत (जिसे तंत्र में 'तैती' कहते हैं), फिर स्वरों पर 'दिर दिर' तथा पुनः एक तोड़े के साथ फिरत का प्रदर्शन किया गया है। द्रुत गत के बीच में बिलंबित आलाप, जोड़ तथा 'दिरदिर' का प्रयोग चलता रहता है। फिर बराबर की लय में फिरत और अंत में कुछ लयकारी तथा मिज़राबों का प्रयोग करते हुए झाला-वादन कर गत समाप्त होती है। इस प्रकार की गतों को सुनने से यह

स्पष्ट हो जाता है कि इस समय पूर्वी बाज (रजाखानी बाज) पर भी ध्रुपद का प्रभाव प्रारम्भ हो गया था, जो पहले ठुमरी पर ही निर्भर था। इन वादकों के समय से रजाखानी बाज का क्षेत्र बृहत् होने लगा तथा रजाखानी बाज को बजाने वाले भी मसीतखानी बाज एवं बीन आदि के प्रभाव से वंचित न रह सके।

यूसुफ अली खाँ के पुत्र इस्माइल खाँ सभी प्रकार के अतिरंजित प्रयोगों एवं जटिलताओं से दूर साफ सुथरा द्रुत बाज का एक अविकृत नमूना हैं। किन्तु इन्होंने अपने घराने की वादन शैली का केवल निर्वाह ही किया है जबकि यूसुफ अली खाँ के शिष्य उस्ताद इलियास खाँ का बाज शुद्ध ध्रुपद शैली का बाज है। इनका आलाप - वादन ध्रुपद अंग से होता है जिसका क्रम ध्रुपद की चारों तुकों -- स्थायी, अन्तरा, संचारी और आभोग -- के समान ही रहता है। आलाप में मीड़ और गमक का काम अधिक रहता है। ध्रुपद परम्परा में निषिद्ध मुर्की, फंदा का प्रयोग बिलकुल नहीं होता। राग क्यानट में बजाया हुआ उनके आलाप का कुछ अंग इस प्रकार है--[५४]

प़सा, स रे स, सा ध़ - नि़प़, रे़ ग़ म़ प़, म़ ग़ म़ रे़, सा़, सा़ रे़, रे ग़, ग़ म़, नि़ ध़ प़, रे़ ग़ म़ प़, म़ ग़ म़, रे़ स़, प़ सा, सा रे सा, स स स, सं सं -रे सा।

प प, रे, रे ग, ग म, म प, प म ग, म रे स, स, स८स स८नि़ नि़, रे स।

रे ग म, नि ध प, प रे, रे ग, ग म, म प, पम ग म रे स। प सां, सं रें सं, सं घ, घ घ प, रे ग म नि़ ध प, म ग म, रे सा।

स स, प प, रे, रेग, ग म, म प, म ग म रे स, सं रें सं, घ, नि प, प सं, प सं, सं रें सं, रें गं मं पं, म ग म रे स, प रे, रें गं मं पं, मं गं मं रें सं।

प सां, सं रें सं, सां ध नी प, रे ग म, नि़ ध प प रे, रे ग, गम, म प म ग म रे, सा।

आलाप, जोड़ और झाला के बाद आप मसीतखानी बाज का प्रयोग करते हैं। मिजराबों द्वारा बदल कर बजाना ही इनकी विशेषता है। उदाहरणार्थ उस्ताद

इलियास खाँ अपनी विलम्बित गत को कुछ इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं [५४] --

कायानट राग तीन ताल विलम्बित लय

३
नि
सस | स संसं घ सां
दिर | दा दिर दा रा

× २ ०
घ घ प पप | रे रेरे ग- म प | गम रे स
दा दा रा दिर | दा दिर दाडर दा | दिर दा रा

इस गत की अंतिम स्वरों की मिजराब 'दारादार' को बदल कर 'दाड रदा डरदिर दारा' आदि बजाते हैं तथा पन्द्रहवीं और सोलहवीं मात्राओं के स्वरों की मिजराब 'दारा' कोबदलकर 'दाडदारादादारादा' इस प्रकार बजाकर सम पकड़ते हैं। आपका द्रुत बाज भी वैचित्र्य लिए हुए होता है, जिसमें सुन्दर एवं कठिन पुरानी गतों का प्रयोग है। उनकी केवल गत ही ३ या ४ आवृत्तियों की होती है, राग सिंधूरा की एक गत [५४] :--

× २ ० ३
म
ग म- रे सा | - घ -घ संसं | नि -घ -प घघ | म पप घ सं
दा दाड दा रा | ड दा डर दिर | दा डर डदा दिर | दा दिर दा रा

ग म- रे स | - घ -घ संसं | नि घ ममे पप | ग -गरे -रे स
दा राड दा रा | ड दा डर दिर | दा रा दिर दिर | दाड रदा डर दा

स संसं नि- सं- | -सं सं- रेंरें संसं | नि- नीघ -प घघ | म प घ- सं-
दा दिर दाड दाड | डदा राड दिर दिर | दाड रदा डर दिर | दा रा दाडरा

उस्ताद इलियास खाँ के बाज में गमक, मीड़ और 'दिर दिर' का काम अधिक है। तोड़ों को गमक के साथ बजाना तथा 'दिर दिर' का प्रयोग अत्यधिक रूप से गतादि में करते हैं।

आधुनिक समय में सितार वादन की श्रृंखला में कई प्रकार के नवीन बाजों का प्रणयन किया जा रहा है, जिसमें जाफर खानी बाज एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यह बाज अब्दुल हलीम जाफर ने अपने पिता जाफर खां के नाम से निकाला है। इस बाज के अन्तर्गत आधुनिक वादन शैली की सूक्ष्मता पर काफी ध्यान दिया गया है।[५५]

जाफर खानी रचना के बारह पृथक-पृथक भाग होते हैं जिन्हें क्रमिक रूप से बजाने पर जो रचना बनती है बहुत ही सुन्दर होती है। अगर इन बारहों भागों को वादन में सम्मिलित न किया जाय तो रचना अधूरी रहती है।[५५] विलम्बित गतों में इन्होंने सोलह मात्राओं के मरण में बांए हाथ के काम को बढ़ा दिया है, जिसमें एक मात्रा और एक मिज़राब में चार, छह, आठ, बारह, सोलह स्वरों का मरण, खटका, मुर्की, ज़मज़मा, मसक, लहक, लचक और कणों को परदों पर और मींड में रखकर किया जाता है। यह विलंबित में जाफरखानी बाज है। इसमें गत-मरण, ठाह्न, गत-अंग-चाला, झार-मरण, लड़ंत का बाज, गत-आमद, उठ्ठलड़ी, ज़मज़मा, लड़ी और झपक अंग हैं।[५६]

आलाप वादन में बजने वाला जोड़ झाला इन्होंने अपने बाज में नहीं रखा है। इनका कथन है कि क्योंकि इसके साथ ही झाला अपने चरमोत्कर्ष-बिंदु को स्पर्श कर लेता है। यहीं लय का अंतिम पड़ाव भी आ जाता है तथा इसके पश्चात् उसी राग को फिर नए सिरे से बजाने का कोई औचित्य नहीं है।[५५] परन्तु यह अपना - अपना दृष्टिकोण है। कुछ कलाकारों का कथन है कि आलाप में बजने वाली सभी सामग्री यथा स्वर विस्तार, जोड़ालाप जिसमें लयबद्धता के साथ ही छोटे-छोटे तोड़े एवं तानों का जिस प्रकार प्रयोग होता है, उसी प्रकार झाले का स्थान है। यह सभी पहलू राग का एवं वादन का परिचय होते हैं। इनका प्रारम्भ में वादन अनिवार्य होता है।[५७]

खां साहब ने बताया है कि 'जोड़ के बाद झाला केवल सुरबहार में ही बजाया जाता है, क्योंकि उस पर गतें नहीं बजायी जातीं।'[५५]

अब्दुल हलीम जाफर खां का उक्त बयान काफी तर्कसम्मत प्रतीत होता है। परन्तु अधिकतर संगीतकार इसके विरुद्ध झाले का वादन आलाप के अंग में करना ही न्यायसंगत मानते हैं। जाफरखानी बाज में बीन का अंग स्पष्ट रूप से मिलता है। इस बाज के वादक हलीम जाफर के वादन को सुनने से संगीत की गहराई का पता चलता है। इनके वादन में तानों का प्रयोग बहुत द्रुत गति से किया जाता है। परन्तु अभी यह बाज ज्यादा प्रचलित नहीं हुआ है।

विभिन्न बाजों का तुलनात्मक अध्ययन करने से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सितार के प्रारंभिक मसीतखानी बाज में फैलाव एवं विस्तार करने की इतनी अधिक क्षमता है कि प्रारम्भिक काल से आज तक कलाकारों द्वारा अनेक बाजों का आविष्कार किया गया परन्तु यह सभी में विद्यमान है। इसके विकास में वीणा की तकनीकों का पर्याप्त योगदान रहा। इसका प्रमुख कारण यही था कि प्रारम्भ में सितार एक अप्रचलित वाद्य रहा जिसे मसीतखानी बाज के आविष्कार के पश्चात भी वीणा की तुलना में निम्न कोटि का माना जाता रहा। जब किसी व्यक्ति ने घराने बाज वादकों से वीणा सीखने की इच्छा व्यक्त की तो उस्तादों ने अपने घराने की वादन सामग्री उन्हें न देकर शिक्षा दी। इस कारण सितार वादकों ने स्वयं को वीणा वादकों के बराबर लाने के लिए सितार में वीणा की तकनीकों का अधिक से अधिक प्रयोग करना प्रारम्भ किया। इस प्रकार मसीतखानी बाज को एक सम्पूर्ण बाज बना दिया। इसका श्रेय मुख्यत: बहादुर खां, रहीम सेन एवं अमृतसेन को है। इन्हीं के प्रयासों से एवं वीणा वादकों की संकुचित प्रवृत्ति से, वीणा जो कि एक श्रेष्ठ भारतीय वाद्य था उसका अन्त हो गया एवं सितार वाद्य जो कि अभारतीय था, अपने चरमोत्कर्ष को प्राप्त हो गया।

मसीतखानी बाज के कुछ बाद ही पूरबी बाज जो कि रजाखानी बाज के नाम से जाना जाता है, अपनी प्रारंभिक अवस्था में मान्य नहीं माना गया एवं उच्च श्रेणी के कलाकार इस बाज को हेय दृष्टि से देखते थे। इस काल में जब कुछ प्रतिभाशाली कलाकारों को उच्चकोटि के सैनी वादकों से शिक्षा प्राप्त न हो सकी एवं अगर शिक्षा दी भी गयी तो उन्हें अपना सैनी बाज नहीं सिखाया। उन कीर्तिमान कलाकारों ने रजाखानी बाज पर कड़ी मेहनत करके इस बाज को इतना मांजा कि उसे मसीतखानी बाज के समान चमका दिया। इनमें गुलाम मोहम्मद, सज्जाद मोहम्मद, बरकतउल्ला खां के नाम प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं। इस कारण इस काल में दोनों ही बाज प्रचलित रहे। जो कलाकार मसीतखानी बाज बजाते थे, वह रजाखानी बाज नहीं बजाते थे, ठीक इसी प्रकार जो कलाकार रजाखानी बाज बजाते थे, वह मसीतखानी बाज को पसंद नहीं करते थे, परन्तु इनके बाद के कलाकारों ने दोनों बाजों की खूबियों को परखा एवं दोनों बाजों को अपनाया। इस प्रकार आज सितार वादन का यही एक क्रम प्रचलित है जिसमें क्रमशः आलाप, जोड़, झाला, मसीतखानी गत, रजाखानी गत अन्ततः झाला बजाकर वादन का समापन किया जाता है। आज कुछ अन्य वादन प्रणालियों पर भी प्रयोग किये जा रहे हैं परन्तु मसीतखानी एवं रजाखानी बाज की प्रचलितता के सम्मुख वह प्रकाश में नहीं आ पा रहे हैं। इसका संक्षिप्त क्रमिक विकास जानने हेतु घराने वाले अध्याय के चार्ट ७ पर दृष्टिपात कीजिये। इसमें जिन वादकों का नाम मसीतखानी बाज के नीचे दिया है, वह मसीतखानी बाज बजाते थे तथा क्रमिक रूप से जैसे-जैसे उन्होंने रजाखानी बाज भी बजाना आरम्भ किया तो उनके आगे (र) लिखा है। ठीक ऐसे ही रजाखानी बाज के नीचे लिखे वादकों के लिए संकेत हैं।

ग्रन्थ एवं ग्रन्थकारों की सूची

१. वी०जी० जोग, संगीत पत्रिका, अप्रेल १९८४, पृष्ठ ३७-४१ ।

२. उ० बिसमिल्ला खां सितार की गतों को ही अधिकतर अपनी शहनाई पर उतारते हैं । साक्षात्कार 'हरिदास संगीत समारोह', मथुरा, १९८१ ।

३. पं० हरीप्रसाद चौरसिया' बांसुरी वाद्य पर सर्वप्रथम सितार की गतों का वादन इन्हीं के द्वारा किया गया ।

४. ब्रजभूषण लाल काबरा, साक्षात्कार, अहमदाबाद, जनवरी १९८४ ।

५. अरविन्द पारिख, संगीत कला विहार, जुलाई १९५७, पृष्ठ २७९-२८९, मराठी, से स्वयं अनुवादित, एवं संगीत पत्रिका, अगस्त १९६८, पृष्ठ ३१ ।

६. वी०के० राय चौधरी, भारतीय संगीत कोश, १९७५, पृष्ठ ७९ ।

७. अल्लाउद्दीन खां, गत तिलक कामोद, ब्रजभूषणलाल काबरा के संग्रह से प्राप्त, अहमदाबाद ।

८. अली अकबर खां तथा रविशंकर की जुगलबंदी, राग सिंधु भैरवी, सारंग, ब्रजभूषण लाल काबरा के संग्रह से प्राप्त, अहमदाबाद ।

९. हरिश्चन्द्र श्रीवास्तव, वाद्य शास्त्र, १९५६, पृष्ठ १०८ ।

१०. सुदर्शनाचार्य शास्त्री, संगीत सुदर्शन, १९१६, परिचय पृष्ठ २६-२७ ।

११. दरगाह कुली खां, मीराते देहली, १७१८-३९, पृष्ठ ५६ ।

१२. पं० जगदीश नारायण पाठक, सितार शिक्षा, भाग-१, १९६७, पृष्ठ २७ ।

१३. वी०के० राय चौधरी, भारतीय संगीत कोश, १९७५, पृष्ठ ८० ।

१४. दरगाह कुली खां, मीराते देहली, १७१८-३९, पृष्ठ ५५ ।

१५. विलियम इरविन, 'लेटर मुगल्स', भाग -१, १९७१, पृष्ठ १९३ ।

१६. वी० के० राय-चौधरी, भारतीय संगीत कोष, १९७५, पृष्ठ ८० ।

१७. एस० बन्दोपाध्याय, सितार मार्ग, १९५३, पृष्ठ ९८ ।

१८. इसी शोधप्रबंध के प्रथम अध्याय के 'क' और 'ख' भाग ।

१९. सैयद सफदर हुसैन खां देहलवी, कानून सितार, १८७०, पृष्ठ १७ ।

२०. सादिक अली खां, समरमाय: इशरत, १८९५, पृष्ठ २२२-२३० ।

२१. स्वयं निर्मित ।

२२. सदिक अली खां, सरमाय: इशरत, १८९५, पृष्ठ २०३ ।

२३. उमर खां के संग्रह से प्राप्त, कलकत्ता ।

२४. वी०के० राय चौधरी, भारतीय संगीत कोष, १९७५, पृष्ठ १५४-१५५ ।

२५. सुदर्शनाचार्य शास्त्री, संगीत सुदर्शन, १९२३, पृष्ठ २७ ।

२६. वही, पृष्ठ ८८ ।

२७. वही, पृष्ठ ८९ ।

२८. वही, पृष्ठ ११६ ।

२९. सादिक अली खां, सरमाय: इशरत, १८९५, पृष्ठ २०८-२०९ ।

३०. सुदर्शनाचार्य शास्त्री, संगीत सुदर्शन, १९२३, पृष्ठ २ ।

३१. अमृत सेन का बजाया राग गुर्जरी तोड़ी, उमर खां के संग्रह से प्राप्त ।

३२. सैयद अहमद खां, असर-उस-सनादित, १९६५, पृष्ठ ६८८ ।

३३. जगदीश नारायण पाठक, सितार सिद्धान्त, भाग-१, १९६७, पृष्ठ १०।

३४. फजल हुसैन, राग तिलक कामोद, ब्रजभूषण लाल काबरा के संग्रह से प्राप्त ।

३५. बरकत उल्ला खां, राग झूप कल्याण का रिकार्ड, एम०जी० दिग्गजी, अहमदाबाद की सहायता से ।

३६. सैयद सफदर हुसैन खां, कानून सितार, १८७० ।

३७. सरयू कालेकर, संगीत पत्रिका, अगस्त १९७६, पृष्ठ ३१ ।

३८. आचार्य बृहस्पति, मुसलमान और भारतीय संगीत, १९७४, पृष्ठ ३३ ।

३९. खुशीराम वेदी, सितार शिक्षा, पृष्ठ ३८-४० ।

४०. वी०के० राय चौधरी, भारतीय संगीत कोष, १९७५, पृष्ठ १०७ ।

४१. मोहम्मद करम इमाम खां, मादन-उल-मूसीकी, १९२५, पृष्ठ ४४-४५ ।

४२. सजन मिलाप, इटावा घराना, मनमोहन ठाकोर द्वारा इमरत खां से की गयी भेंटवार्ता, बम्बई, १९८२ ।

४३. इमदाद खां, राग भैरवी, इमरत खां के संग्रह से प्राप्त, कलकत्ता ।

४४. इमदाद खां, राग देस, इमरत खां के संग्रह से प्राप्त, कलकत्ता ।

४५. ब्रजभूषणलाल काबरा, साक्षात्कार, अहमदाबाद, जनवरी १९८४ ।

४६. इनायत खां, राग जोगिया, ब्रजभूषणलाल काबरा के संग्रह से प्राप्त, अहमदाबाद ।

४७. इनायत खां, राग विहाग, इमरत खां के संग्रह से प्राप्त, कलकत्ता ।

४८. इनायत खां, राग तिलक कामोद, इमरत खां के संग्रह से प्राप्त, कलकत्ता ।

४९. इनायत खां, राग खमाज, ब्रजभूषणलाल काबरा के संग्रह से प्राप्त, अहमदाबाद ।

५०. इनायत खां, राग देस, इमरत खां के संग्रह से प्राप्त, कलकत्ता ।

५१. इनायत खां, राग पूर्वी, ब्रजभूषणलाल काबरा के संग्रह से प्राप्त, अहमदाबाद ।

५२. वहीद खां, राग पीलू, राग खमाज, संगीत नाटक अकादमी, दिल्ली ।

५३. विलायत खां, राग यमन, शोधकर्त्री के निजी संग्रह से, अहमदाबाद ।

५४. रजनी श्रीवास्तव, संगीत पत्रिका, अगस्त १९८४, पृष्ठ ३५-४३ एवं ६१ ।

५५. उस्ताद अब्दुल हलीम जाफर खां, साक्षात्कार, बम्बई, दिसम्बर १९८२ एवं जुलाई १९८४ ।

५६. एम०ए० व्यास, संगीत पत्रिका, जुलाई १९८४, पृष्ठ २० एवं हलीम अकादमी आफ सितार, १९८२ ।

५७. निखिल बैनर्जी, साक्षात्कार, कलकत्ता, फरवरी, १९८४ एवं रविशंकर, साक्षात्कार, बनारस, फरवरी १९८४ ।